चन्दामामा

वर्षगांठ का विशेषांक





फिर दोनों सेनाओं का मुकाबला हुआ। भयङ्कर युद्ध हुआ। ग्यारहवें दिन के इस युद्ध में अभिमन्यु खूब लड़ा। भीम और शल्य में भीषण गदा युद्ध हुआ। इसमें शल्य हारकर भाग गया। दस दिन के युद्ध के बाद भी युद्ध की भयङ्करता कम होती न मालूम होती थी।

द्रोण, पाण्डव सेना का संहार करता युधिष्ठिर को पकड़ने की पूरी कोशिश कर रहा था।

युधिष्ठिर को कई पाञ्चाल योद्धा घेरे हुए थे। द्रोण मुकाबला करनेवालों में से सिंहसेन और व्याघ्रदत्त का गला काटकर युधिष्ठिर के पास गया। हाहाकार शुरु हो गया कि युधिष्ठिर पकड़ा जानेवाला था। इतने में वहाँ अर्जुन आया। वह अन्धेरे होने तक कौरव सेना पर बाण वर्षा करता रहा। उनको दम लेने न दिया। उनके छक्के छुड़ा दिये।

उस दिन रात को द्रोण ने शिविर में दुर्योधन से कहा-"दुर्योधन, अगर अर्जुन न आता तो युधिष्ठिर को आज पकड़कर तुम्हें सौंप देता। इस भयङ्कर युद्ध की अपेक्षा तो वही अच्छा उपाय मालूम होता है। अगर कोई अर्जुन को युद्ध क्षेत्र के किसी और भाग में ले गया तो उस समय मैं युधिष्ठिर को पकड़ लूँगा। उसके रहते उसको पकड़ना कठिन है।"

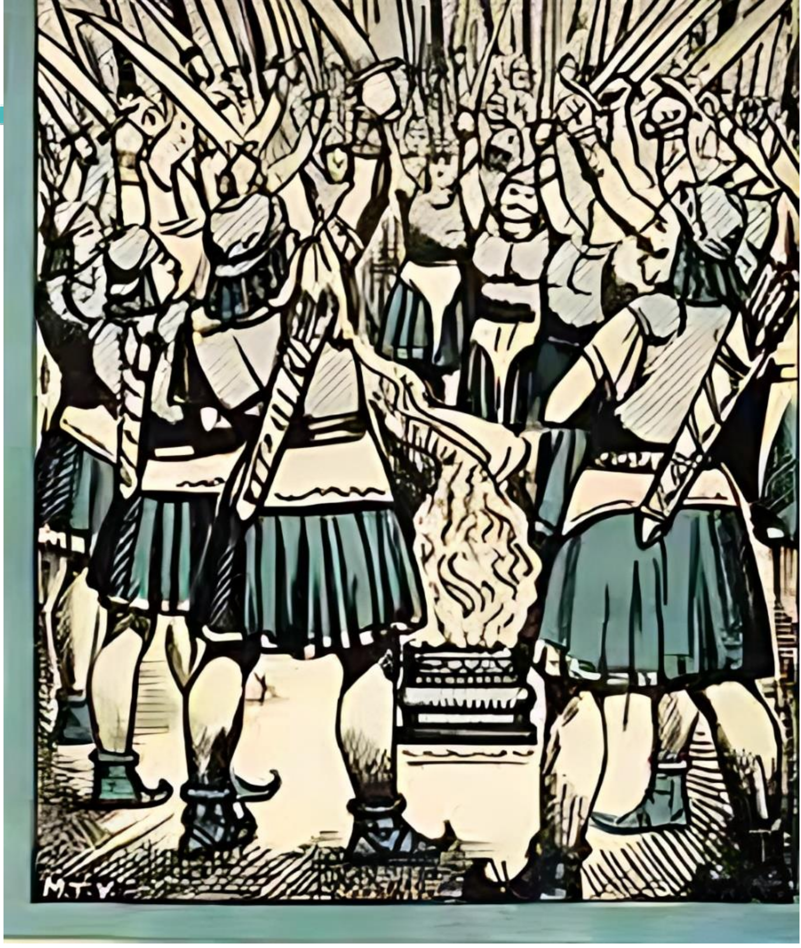
त्रिगर्त के राजा सुशर्मा ने यह सुनकर अपनी तरफ से और अपने भाइयों की तरफ से दुर्योधन से यों कहा-"राजा, हमें अनादिकाल से इस अर्जुन से चिढ़ है। हमने यद्यपि इसका कभी कुछ नहीं बिगाड़ा है तो भी मौके व मौके वह हमारा अपमान

करता रहता है। उससे बदला लेने के लिए हमें युद्ध ने अच्छा मौका दिया। हम उसे कल अलग ले जायेंगे। उससे लड़कर तय कर लेंगे कि वह जीवित रहता है, या हम। इससे आपका लाभ होगा और हमें यश मिलेगा।"

अर्जुन से युद्ध करने के लिए एक सेना तैयार हो गई। उसमें सत्यरथ, सत्यवर्मा, सत्येष्ट, सत्यव्रत, सत्यकर्मा-- भाई दस हज़ार रथ लेकर आये। मालब, तुण्डिकेर तीस हज़ार रथ लेकर, सुशर्मा और उसके भाई दस हजार रथ लेकर और, और कई देशोंवाले दस हजार रथ लेकर युद्धभूमि में पहुँचे।

इतनों ने अग्नि की शपथ करके कहा-"युद्ध में यदि हम पीछे हटे तो हमें भयङ्कर नरक भोगना होगा। जब तक हम में प्राण हैं, हम अर्जुन को युद्धभूमि से न जाने देंगे।" उन्होंने यों प्रतिज्ञायें कीं। इस तरह की प्रतिज्ञा करनेवालों को संशप्त कहा जाता है। इसी कारण इन सबका नाम संशप्त पड़ा।

"हमसे आकर एक अलग युद्ध भूमि में लड़ो।" उन्होंने अर्जुन को ललकारा।



इस तरह ललकारे जाने पर न आना अर्जुन के लिए अपमानजनक था।

परन्तु युधिष्ठिर ने कहा-"तुम जानते ही हो कि द्रोण ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि वह मुझे जीवित पकड़कर दुर्योधन को सौंप देगा।"

यह सुन अर्जुन ने युधिष्ठिर से कहा- "भैया, मेरी अनुपस्थिति में सत्यजित, तुम्हारा अङ्गरक्षक होकर युद्ध करेगा। अगर सत्यजित हरा दिया जाये, या मार दिया जाये तो, तुम युद्ध भूमि छोड़कर चले जाना। भले ही हमारे सैनिक तुम्हारी



रक्षा करने का वचन दें। मैं जल्दी से जल्दी उन सशप्तों की खबर लेकर वापस आ जाऊँगा।"

युधिष्ठिर ने अर्जुन का आलिङ्गन करके उसे विदा किया। संशप्त युद्ध भूमि के दक्षिण में चन्द्राकार व्यूह बनाकर अर्जुन की प्रतिक्षा कर रहे थे। अर्जुन उनसे अकेला लड़ने के लिए आया। उसके हाथ में गाण्डीव चमक-सा रहा था।

उस युद्ध में सुधर्मा नामक योद्धा अर्जुन के बाणों का शिकार हुआ। तुरन्त उसकी सेना तितर बितर होकर कौरव सेना की ओर भागने लगी। सुशर्मा चिल्ला रहा था-"वीरो, भागो मत, तुम अपनी प्रतिज्ञा पर चलो। बिना वचन पूरा किये तुम जाओगे तो दुर्योधन क्या कहेगा?" भागते सैनिक फिर वापस आकर अर्जुन से युद्ध करने लगे। अर्जुन संशप्तों का संहार करने लगा।

इस बीच मुख्य युद्ध भूमि में पाण्डव और कौरव सेनाओं में बारहवें दिन का युद्ध प्रारम्भ हो गया। क्योंकि अर्जुन दूर लड़ रहा था, इसलिए उस दिन के युद्ध के आरम्भ से द्रोण, युधिष्ठिर के पास आने का प्रयत्न कर रहा था। वह बड़ी वीरता से लड़ रहा था।

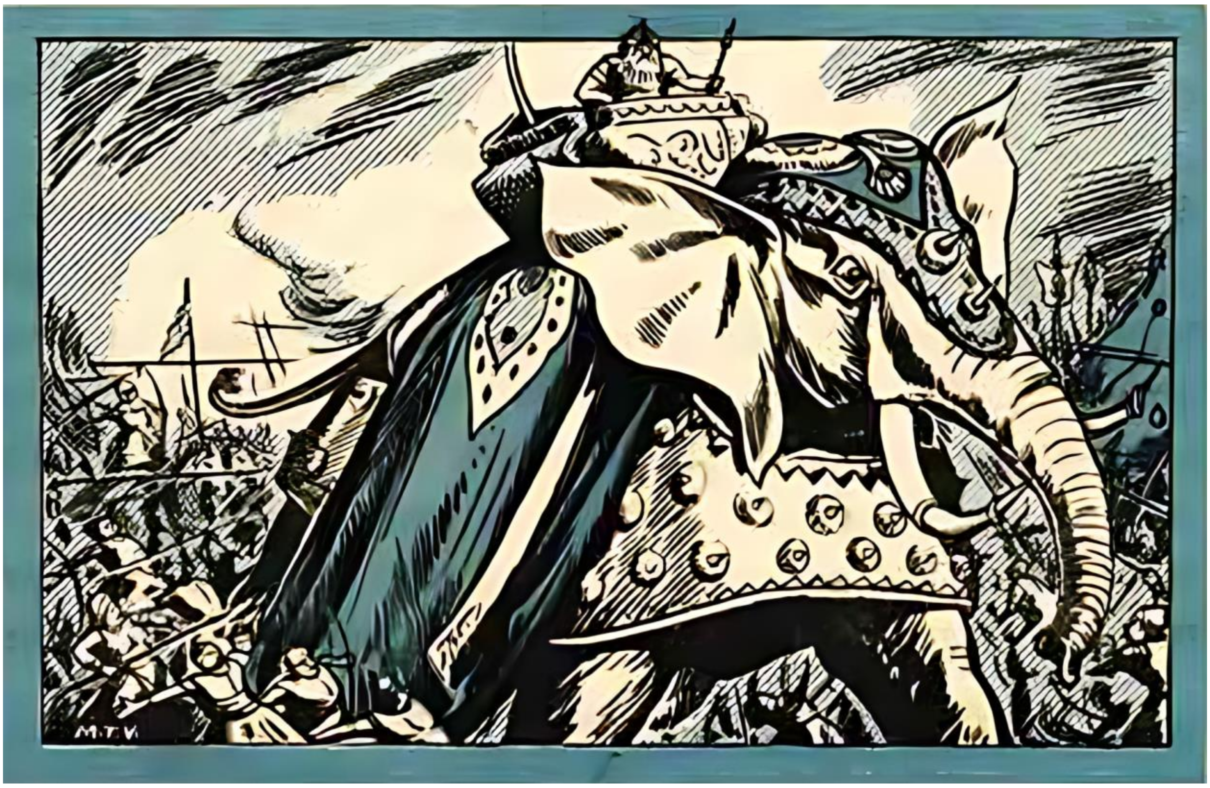
युधिष्ठिर का अर्जुन द्वारा नियुक्त अङ्गरक्षक और उसका सहायक, वृक, द्रोण से युद्ध करते-करते वीरगति को प्राप्त हुए। सत्यजित के मरते ही युधिष्ठिर अपने रथ को द्रोण से दूर ले गया। उसी समय पाण्डव सेना के कई योद्धा द्रोण का सामना करने लगे। पाञ्चाल नाम का एक राजकुमार भी द्रोण से लड़ता मारा गया। भागते पाण्डव सैनिकों को भीम आदि ने हौसला दिया। भीम कौरव सेना के हस्ति सैनिकों

का संहार करने लगा। यह देख भगदत्त अपना प्रसिद्ध हाथी लेकर पाण्डव सेना के वीरों को भगाने लगा। भीम भी भगदत्त का कुछ न बिगाड़ सका। उससे डरकर पाण्डव सेना हाहाकार करने लगी पीछे हटने लगी।

उधर अर्जुन संशप्तों से लड़ रहा था। तब उसे पता लगा कि भगदत्त सेना को सता रहा था। उसने कृष्ण से रथ को कौरव सेना की तरफ ले जाने के लिए कहा। उसने यह भी बताया कि सिवाय उसके भगदत को कोई नहीं मार सकता था।

कृष्ण ने रथ मोड़ना चाहा। परन्तु सुशर्मा आदि ने अर्जुन को घेर लिया। उसे जाने न दिया। अर्जुन उनसे एक तरफ लड़ता रहा और दूसरी तरफ रथ को कौरव सेना की ओर ले गया। इस युद्ध में अर्जुन ने तेज़ बाणों से सुशर्मा को पीछे ही न भगाया, अपितु उसके भाई को मार भी दिया।

जल्दी ही अर्जुन का रथ कौरव सेना में पहुँच गया और जल्दी ही अर्जुन भगदत्त का मुकाबला करने लगा। दोनों में भीषण युद्ध हुआ। भगदत्त ने अर्जुन का निशाना





लगाकर कुछ फेंका। पर उसकी चोट से अर्जुन का कुछ न बिगड़ा। मुकुट एक तरफ हट गया। अर्जुन ने मुकुट ठीक करते हुए कहा- "बस, यही तुम्हारा निशाना है?"

यह सुन भगदत्त आगबबूला हो गया। उसने वैष्णास्त्र निकाला और मन्त्र पढ़कर उसे अर्जुन पर फेंका। वह अचूक अस्त्र अर्जुन की ओर आ रहा था कि कृष्ण ने खड़े होकर उसको अपनी छाती पर ले लिया। वैष्णास्त्र माला बनकर कृष्ण के गले में शोभने लगा।

अर्जुन ने यह देख अपने को अपमानित समझा। उसने कृष्ण से कहा-"अब मुझे युद्ध करने की क्या ज़रूरत है? घोड़े ही हाकूँगा। अगर मैं असमर्थ होकर किसी खतरे में हूँ, तो तुम मेरी रक्षा कर सकते हो, पर जब गाण्डीव लेकर मैं सुर और असुरों को भी जीत सकता हूँ तब तुम्हारा यों मेरी रक्षा करना क्या ठीक है? मैं यह नहीं देख सकता।"

"अर्जुन, मैं तुम्हें एक भेद बताता हूँ। सुनो ! भूदेवी ने अपने लड़के नरकासुर की रक्षा के लिए कभी यह वैष्णास्त्र पाया था। उसे लेकर तीनों लोकों को उसने सताया। आखिर वह मेरे हाथ मारा गया। उसके बाद यह अस्त्र उसके लड़के भगदत्त को मिला। क्योंकि अस्त्र उसके पास था, इसलिए वह अब तक अजेय समझा जाता रहा था। अब वह इसे भी खो बैठा। अब इसमें कोई भी शक्ति नहीं है। इसलिए, इसे और इसके हाथी को तुम आसानी से मार सकते हो। अब समझे?"

हुआ भी यही। अर्जुन ने एक बाण छोड़ा। वह हाथी के कुम्भस्थल पर लगा

और वह मरकर नीचे गिर गया। फिर एक बाण से अर्जुन ने भगदत्त को मार कर गिरा दिया।

उस दिन के युद्ध में, अर्जुन ने शकुनि के भाई वृषक और भचल को भी मार दिया। कर्ण के भाइयों को, कर्ण और दुर्योधन के सामने ही मार दिया।

यह दिन पाण्डवों के लिए अनुकुल और कौरवों के लिए प्रतिकूल रहा। अर्जुन ने कौरव सेना को बहुत तङ्ग किया। द्रोण अपनी प्रतिज्ञा न पूरी कर सका। युधिष्ठिर नहीं पकड़ा गया।

रात बीती। सवेरा होते ही दुर्योधन ने द्रोणाचार्य के पास जाकर कहा कि हम भी तुम्हारे शत्रु हैं। नहीं तो युधिष्ठिर के इतने पास जाकर तुम उसे छोड़ते? पहले मुझ पर कृपा कर वचन तो दे दिया। जब वचन पूरा करने का समय आया तो अपना इरादा बदल लिया। क्या कोई बड़ा आदमी आशायें बँधाकर यों किसी को निराश करता है?"

यह सुन दोण बड़ा शर्मिन्दा हुआ। उसने कहा-"जब मैं तुम्हें सन्तुष्ट



करने के लिए इतना सब कुछ कर रहा हूँ; तुम्हारा यों कहना उचित नहीं। उस सेना को कौन जीत सकता है, जिसकी रक्षा अर्जुन कर रहा हो? मैं आज एक बड़ा व्यूह तैयार करूँगा। उसे देवता भी नहीं तोड़ सकते। उसे तोड़ने का महावीर ही प्रयत्न कर सकता है। अगर अर्जुन को यदि आज भी अलग रखा गया, पाण्डवों का कोई न कोई वीर जरूर इस व्यूह पर बलि होकर रहेगा। यह मेरा आश्वासन है। तुम विश्वास रखो।"

इसके बाद संशप्त फिर अर्जुन को एक तरफ ले गये। द्रोण ने कौरव सेना से

पद्मव्यूह रचा। पद्मव्यूह को तोड़नेवाले चार ही थे। कृष्ण, प्रद्युम्न और अर्जुन और किशोर अभिमन्यु।

उनमें से अभिमन्यु ही उस दिन युद्ध भूमि में था। इसलिए युधिष्ठिर ने उसे बुलाकर कहा-"बेटा, आज तुम पर बड़ा भार आ पड़ा है। अगर आज तुम्हारे पिता और मामा होते तो इस ब्यूह को आसानी से तोड़ देते। पर वे संशप्तों से युद्ध करने गये हुए हैं। हम में से तुम ही एक पद्मव्यूह को तोड़ सकते हो। इसलिए तुम ही आज हमारे नेता हो। तुम पद्मव्यूह में घुसो। तुम्हारे पीछे और योद्धा आयेंगे और व्यूह को तोड़ देंगे।

अभिमन्यु इसके लिए मान गया और पद्मव्यूह को तोड़ने के लिए तैयार हो गया। उसने सोने का कवच पहना। रथ में बैठकर अपने सारथी सुमित्र से कहा-"पद्मव्यूह के द्वार की रक्षा द्रोण कर रहा है। रथ को ठीक उसके पास ले जाओ। उसको जीतकर मैं पद्मव्यूह में प्रवेश करूँगा।"

सुमित्र को यह बिल्कुल पसन्द न आया। उसे लगा कि पाण्डवों ने इतना भार इस छोटे बच्चे पर डाल कर अच्छा न किया था। उनके लिए ऐसा करना अनुचित था।

"बाबू, तुम वीर तो हो, पर बड़े लाड़ प्यार से पाले गये हो।" उसने धीमे से कहा।

अभिमन्यु ने हंसकर कहा-"रे! मेरा पिता अर्जुन है। कृष्ण मेरा मामा है। मैं नहीं जानता कि भय क्या चीज़ है। अगर देवताओं के साथ इन्द्र भी लड़ने आया तो मैं उससे भी लड़ूँगा। रथ को द्रोण की ओर ले जाओ।"





[६]

[चित्रसेन अपने अनुचरों के साथ अपने महल की ओर जा रहा था कि उग्राक्ष के भेजे हुए राक्षस भागे भागे आये। वे फिर उसको अपने सरदार के पास ले गये। वहाँ चित्रसेन को अमरपाल नाम का एक व्यक्ति दिखाई दिया। उसने अग्निद्वीप के वासियों के बारे में कुछ बताया। फिर यकायक आसमान की ओर सिर उठाकर देखने लगा। बाद में—]

अमरपाल का यह विचित्र व्यवहार देखकर चित्रसेन को बड़ा आश्चर्य हुआ। उग्राक्ष कोप के कारण काँप रहा था। हाथ में पकड़ी पत्थर की गदा को हिलाते हुए वह गरजा- "अरे क्या तेरा दिमाग चकरा रहा है? इस गदा की एक चोट से उसे ठीक कर दूँ क्या?"

अमरपाल बिल्कुल न डरा। भयंकर उग्राक्ष की ओर देखते हुए वह मुस्कुराया। फिर उसने कहा-"मेरे मरने के बाद तेरे मरने में अधिक समय न लगेगा। उस नागवर्मा के बारे में तो तुम जानते ही हो, जिसने कपिलपुर को हथिया लिया है। उसकी सहायता अग्निद्वीपवाले कर रहे हैं। तुम उन घावों को न भूलो, जो उनके भयङ्कर पक्षी तुम्हारे शरीर पर छोड़ गये हैं।"

उग्राक्ष समझ गया कि उसके शरीर और घावों पर बँधी पट्टियों को देखकर, अमरपाल



परिहास कर रहा था। वह गरजता पत्थर की गदा से उसका सिर तोड़ने के लिए आगे बढ़ा। पर इतने में चित्रसेन, राक्षस और अमरपाल के बीच में खड़ा हो गया। "ठहरो उग्राक्ष" उसने इस तरह कहा जैसे उसे आज्ञा दे रहा हो।

"ये.... ये.... मानवाधम, मेरी मखौल करता है....इतनी हिम्मत...." उग्राक्ष ने दान्त दिखाये।

"मनुष्यों को इतना नीच न समझो। मेरा विश्वास है कि यह हमारी सहायता करेगा। अगर यह न होता तो तुम इसे जितना चाहो, उतना सता सकते हो।" चित्रसेन ने कहा।

चित्रसेन के यह कहते ही अमरपाल काँपने लगा-"महाराज, यह अन्याय है। आपने मुझे वचन दिया था कि मेरे प्राण नहीं लेंगे। आपकी बात का भरोसा करके ही में पेड़ पर से उतरा था। नहीं तो इन राक्षसों के हाथ में पड़ता ही नहीं। वहीं आत्महत्या कर लेता।"

यह सच है कि मैंने वचन दिया था कि कोई तुम्हारे प्राण नहीं लेगा। पर तुम यही मौका देख मेरे प्रश्नों का उत्तर न देकर, इधर उधर देख रहे हो, तरह तरह के बहाने कर रहे हो। इन परिस्थितियों में मैं अपना वचन पूरा करने के लिए बाध्य नहीं हूँ।" चित्रसेन ने कड़ी आवाज में कहा।

"माफ़ कीजिये। महाराज, में इस क्षण से आपका सेवक हूँ। राजद्रोही नागवर्मा पर मुझे किसी प्रकार का गौरव नहीं है। अग्निद्वीप के जङ्गली जानवर से लोग मुझे कभी पसन्द नहीं आये। पर नागवर्मा से डरकर मैं उनमें शामिल हुआ।" अमरपाल ने दीन स्वर में कहा।

"अगर यही बात है, तो जो कुछ तुम्हें मालूम है वह बताओ। अब नागवर्मा, जो धवलगिरि पर आक्रमण करने निकला है, उसकी सेनाओं के साथ भयङ्कर पक्षियों पर सवार होकर अग्निद्वीप के वासी भी हैं क्या?" चित्रसेन ने पूछा।

"सम्भव है कि हों। कपिलपुर के पास जङ्गल में करीब करीब सौ भयङ्कर पक्षी मय सवारों के हैं। अग्निद्वीप के बासियों का गुलाम बनाकर नागवर्मा ने कुछ आदमी रख रखे हैं। इसलिए ही वे उसकी यों मदद कर रहे हैं।" अमरपाल ने कहा।

"इन भयङ्कर पक्षियों को मारने का कोई आसान तरीका है?" उग्राक्ष ने अपनी पट्टियाँ ठीक करते हुए पूछा।

"क्यों नहीं है? है। अगर उनकी नाकों और नाखूनों में न फँसें तो उनकी गर्दन के टुकड़े टुकड़े किये जा सकते हैं। जहाँ तक गर्दन का सवाल है, वे और पक्षियों से भिन्न नहीं हैं।" अमरपाल ने कहा।

"हाँ.... हाँ..." उग्राक्ष ने जोर से अट्टहास किया।



"अगर इस बार वे दुष्ट दिखाई दिये तो उनकी खबर लूँगा।" इतने में कुछ राक्षस और लोग चिल्लाते चिल्लाते-"सरदार, महाराज......." वहाँ आये।

भयभीत हाहाकार करते जब लोगों को और राक्षसों को अपने समीप आता देखा, तो चित्रसेन को लगा कि फिर कोई आफत आ पड़ी है।

"महाराज! हम अपने पशुओं को चरा रहे थे कि हम पर भयङ्कर पक्षियों ने और शेर के चमड़े पहने लोगों ने हमला किया। वे पशुओं और मनुष्यों को उठाकर ले गये। हम थोड़े ही आदमी थे। उनसे बचकर जैसे तैसे भाग आये।"



लोगों ने चिल्ला चिल्लाकर कहा।

जो उग्राक्ष के पास राक्षस भागे-भागे गये थे उन्होंने भी अपने सरदार से यही कहा। पर वे राक्षस वे न थे, जो पशुओं को चराने गये थे। वे, वे थे, जो चोरी से उनको उठाकर लाना चाहते थे। क्योंकि शेर का चमड़ा पहने हुए लोग उसी समय वहाँ आये, इसलिए इनको खूब मार खानी पड़ी।

"क्यों, चित्रसेन? क्या हम पशुपालकों की रक्षा के लिए चलें?" उग्राक्ष ने निरुत्साहित होकर पूछा।

"और किया ही क्या जा सकता है? जब वे लोग जनता को यों सता रहे हो, तो क्या हम हाथ पर हाथ रखे बैठे रहेंगे?" चित्रसेन ने गुस्से में पूछा।

चित्रसेन तुरन्त उस प्रदेश की ओर निकला। उग्राक्ष ने गम्भीरता दिखाते हुए कहा-"हाँ, चलो! इन दुष्टों की बोटी-बोटी काट कर रख दें।" वह उसके पीछे चला।

सबके कुछ देर तक पेड़ों में से चलने के बाद अमरपाल ने सामने आकर चित्रसेन से कहा-"महाराज! मेरा एक निवेदन है। अब तक शेर का चमड़ा पहननेवाले वे लोग चले गये होंगे। अगर वे न भी गये हुए होंगे, तो हम उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते। जब तक उनके पास वे भयङ्कर पक्षी हैं उनका मुकाबला करना आत्महत्या करने के समान है।" उग्राक्ष ने इस पर सिर हिलाते हुए कहा-"चित्रसेन,अमरपाल के कहने में बहुत कुछ सचाई है। हमें जल्दबाजी नहीं दिखानी चाहिए। आप जानते ही हैं कि रात क्या हुआ था।"

उन दोनों के इस तरह कहने पर चित्रसेन को भी लगा कि वह जो करने

जा रहा था, वह दुस्साहस ही था। वह जान गया कि उनसे लड़ाई होगी, तो उसी के आदमी उस हालत में मारे जायेंगे। उन शत्रुओं का कुछ न बिगड़ेगा। अगर राजा रहते हुए, जनता की वह रक्षा न कर सकता हो, तो वह कब तक राज्य कर सकेगा? वह नागवर्मा, जो उसके पिता के राज्य पर आक्रमण करने निकला था, क्या वह उसके नगर पर बिना आक्रमण किये रहेगा!



चित्रसेन इन सन्देहों और भयों में आगा पीछा देख रहा था कि अमरपाल ने कहा-"महाराज, मैं आपका विश्वासपात्र सेवक हूँ। अगर आप मुझे आग में कूदने के लिए भी कहेंगे, तो मैं कूदूँगा। इसलिए मेरी बात का विश्वास कीजिये। पहले हमें जैसे तैसे उन लोगों के शिवरों का नाश करना होगा, जो उन्होंने कपिलपुर के पास जङ्गलों में बना लिया है। तब इन शेर के चमड़े पहननेवाले लोगों का नाश करना आसान होगा।"

"तुम कह रहे हो कि वहाँ करीब करीब सौ पक्षी हैं। उनको हम कैसे मार सकेंगे?" चित्रसेन ने पूछा।

"उन पक्षियों को मारने का एक आसान तरीका है महाराज!" अमरपाल ने कहा।

"क्या है वह?" चित्रसेन ने पूछा। उग्राक्ष इस वार्तालाप को ध्यान से सुन रहा था। उसने भी जानना चाहा कि क्या उपाय था-"अमरपाल! क्या है वह उपाय?" उसने उत्कण्ठापूर्वक पूछा।

अमरपाल ने एक बार गुस्से भरी नजर से उग्राक्ष की ओर देखा। फिर चित्रसेन से कहा-"महाराज, मैंने बताया था कि कपिलपुर के पासवाले जङ्गल में कुछ भयङ्कर



पक्षी हैं। वे बड़े बड़े पिञ्झड़ों में है। उनके पैरों में बड़ी बड़ी जञ्जीरें बाँधकर उनको तख्तों से बाँध दिया जाता है। उनपर सवारी करनेवाले लोग पासवाले झोंपड़ियों में रहते हैं। उन पक्षियों को तभी मारना होगा जब वे पिञ्झड़ों में हों।"

"ठीक है, मगर मारा कैसे जाये, यही तो समस्या है।" चित्रसेन ने हताश-सा होकर कहा।

"महाराज, मैंने इसका एक उपाय सोच रखा है। उन्हें...." अमरपाल चित्रसेन के कान में कुछ कहने जा रहा था कि सामने के पेड़ों के पीछे से बड़ा शोर सुनाई दिया। चित्रसेन, उग्राक्ष और उनके सेवक उनकी ओर भागे। वे पेड़ों के पास गये। टहनियों के पीछे से आगे की ओर जो नज़र फेंकी तो एक भयङ्कर दृश्य उनको दिखाई दिया।

कुछ भयङ्कर पक्षी भेड़ों और गौवों को इस तरह पकड़कर उड़ रहे थे, जिस तरह मुरगी के बच्चों को लेकर गिद्ध उड़ते हैं। शेर के चमड़े पहननेवाले उन पर सवार होकर ज़ोर ज़ोर से चिल्लाते चिल्लाते भागते गड़रियों पर भाले फेंक रहे थे। एक एक सवार के पास ढेर से भाले थे। पशुपालकों में से कुछ बहादुरी से खड़े हो गये और उन पक्षियों पर जोर जोर से पत्थर फेंकने लगे। पशु चारों तरफ़ अन्धाधुन्ध भाग रहे थे।

यह भयङ्कर दृश्य देखकर चित्रसेन को कँपकँपी हुई। उग्राक्ष भी कोप से काँपने लगा। अपनी पत्थर की गदा पृथ्वी पर ठोककर गरजने ही वाला था कि चित्रसेन ने उसको रोकते हुए कहा-"अब तो सब खतम हो गया है। तुम चिल्लाओगे तो वे हम पर आ मरेंगे। इसलिए गरजने से



कोई फायदा नहीं। अब हम सिर्फ इतना ही कर सकते हैं कि घायल पशुपालकों की मरहमपट्टी करके उनको घर पहुँचा दें।" चित्रसेन के यह कहते ही, उसके अनुचर और राक्षस आगे की ओर बढ़े। परन्तु चित्रसेन ने उन्हें रोककर कहा- "पहले उन दुष्टों को जाने दो।"

देखते देखते अग्निद्वीपवासी अपने अपने वाहनों पर आकाश में उड़ गये। जब वे आँखों से ओझल हो गये तो राक्षस और चित्रसेन के सैनिक घायलों की पट्टियाँ बाँधने लगे। उग्राक्ष एक पेड़ के तने से सटकर खड़ा हो गया। उसने कहा- "चित्रसेन! मैं कभी भी न डरा, मगर आज मुझे भी डर लग रहा है। हमें सोचना होगा कि हम इन दुष्टों से अपनी रक्षा कैसे करें?"

चित्रसेन ने अमरपाल की ओर मुड़कर पूछा-"अमरपाल तुमने कहा था कि अग्निद्वीपवालों को और उनके भयङ्कर पक्षियों को नाश करने का कोई उपाय है। वह उपाय क्या है?"

"उन भयङ्कर पक्षियों को उनके पिञ्जड़ों में, जहाँ वे बाँधे जाते हैं, मारना होगा। यह भी एक ही तरह से हो सकता है..... यह है उनके पिञ्जड़ों में आग लगा कर।"

"क्या यह सम्भव है?" चित्रसेन ने पूछा।

"क्यों सम्भव नहीं है? महाराज! मेरे साथ चार पाँच सैनिकों को भेजिये। में कपिलपुर के जङ्गलों में जाऊँगा। वहाँ के पहरेदारों की आँखों में धूल झोंक कर में उन भयङ्कर पक्षियों को जीते जी, जलाऊँगा।"

(अभी है)



होशियारी ?

एक किसान ने पड़ोस के किखान से एक हण्डा उधार में लिया। वह उसमें मक्खन पिघलाने के लिए आग बना रहा था कि इतने में कहीं से कोई बिल्ली आई और हण्डे पर पैर रखकर खड़ी हो गई। यह देख उसने बिल्ली को भगाया। बिल्ली पीछे की ओर कूदी और साथ हण्डा भी गिरा और उसके दो टुकड़े हो गये।

उस किसान ने गोन्द से दोनों टुकड़े जोड़ दिये और पड़ोस के किसान के पास ले जाकर उससे कहा-"यह लो अपना हण्डा।" पड़ोसी ने देखा कि हण्डे में दरार थी। उसने पूछा-"यह क्या है?"

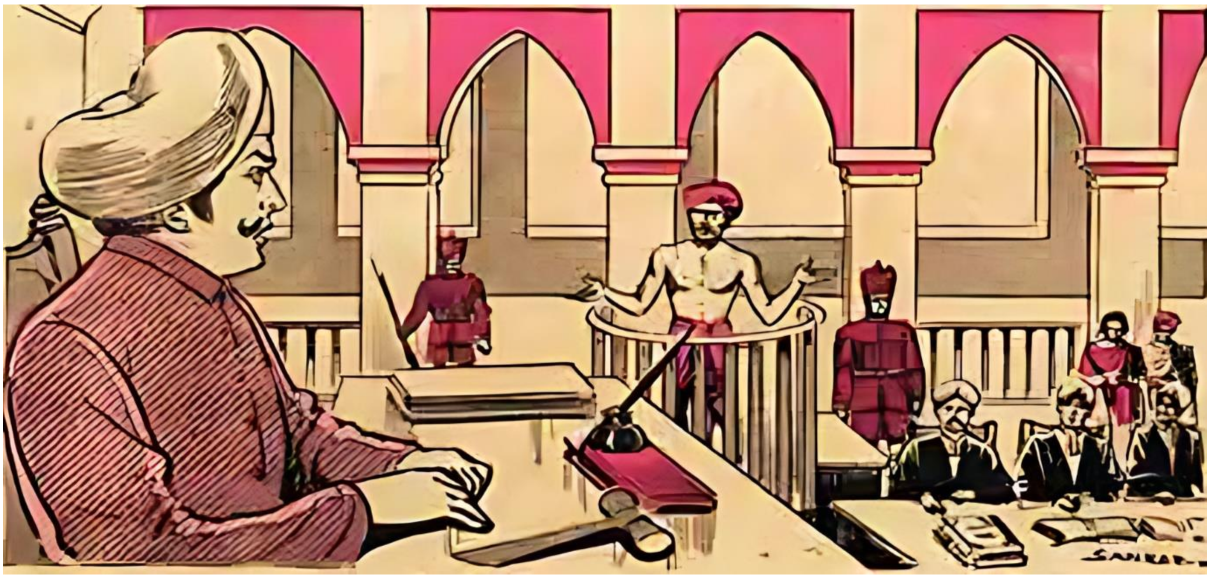
किसान ने कहा-"मुझे नहीं मालूम है।" वह अपने घर वापस चला आया।

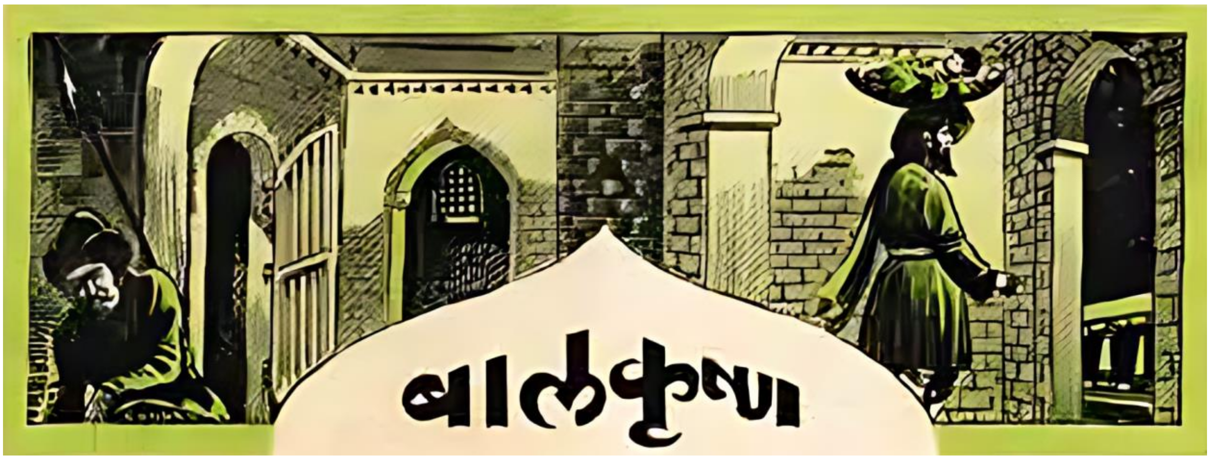
पड़ोसी ने अदालत में फरियाद की। किसान ने वकील से सलाह माँगी। वकील ने सब कुछ सुनकर कहा-" जो कुछ हुआ है उसके लिए क्योंकि कोई गवाह नहीं है, इसलिए तीन तरह से बात की जा सकती है। तुम कह सकते हो कि जब तुमने हण्डा उधार लिया था, तभी वह टूटा हुआ था। या कह सकते हो कि तुम्हारे वापस देने के बाद वह टूट गया था। यह भी कह सकते हो तुमने हण्डा लिया ही न था।"

यद्यपि हण्डे का दाम चार आना ही था, तो भी किसान वकील को एक रुपया देकर लाया।

अगले दिन अदालत में सुनवाई हुई। किसान ने न्यायाधिकारी से यों कहा-"हुजूर, जब मैंने यह हण्डा लिया था तो वह टूटा हुआ था। यह भी सम्भव है कि मेरे देने के बाद वह टूट गया हो। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि मैंने हण्डा लिया ही न था।"

किसान यह न समझ पाया कि वकील की सलाह का पूरी तरह पालन करने पर भी न्यायाधिकारी ने क्यों दो रुपया जुरमाना लगाया था। उसको जुरमाना चुकाना पड़ा। वह वकील को कोसता घर चला गया।





मथुरा नगरी में सब सोये हुए थे। तब कैद में देवकी ने एक बच्चे को जन्म दिया। देवताओं ने पुष्प वर्षा की। कलहप्रिय नारद महामुनि आकर उस लड़के के चारों ओर प्रदक्षिणा करके चले गये। देवकी को बहुत-से शुभ लक्षण दिखाई दिये। तूफान के साथ बिजली चमकने लगी। भूमि हिली। क्योंकि वह कंस को जानती थी, इसलिए वह ये शुभ लक्षण देखकर भी खुश न हुई। वासुदेव ने उसके पास जाकर शिशु को देखकर कहा- "बच्चे को दे दो, कहीं दे आऊँगा।"

"जरा लड़के को जी भर के देखने तो दीजिए।" देवकी ने कहा।

"तुम्हारा जी भी नहीं भरेगा और इस बीच कंस मृत्यु के रूप में आ जायेगा।" वासुदेव ने कहा।

देवकी ने लड़के को वासुदेव को सौंप दिया। और वह कर भी क्या सकती थी? लड़के का भार देखकर वासुदेव हैरान रह गया। जब वह लड़के को बाहर ले जाने लगा तो कैद के फाटक स्वयं खुल गये। चौकीदार गाढ़ निद्रा में थे।

वासुदेव मथुरा नगर पार करके जा रहा था। इतना अन्धेरा कि हाथ को हाथ न दीखता था। रास्ता बिल्कुल न दिखाई देता था। "इस अन्धेरे में मैं न जा पाऊँगा।" वासुदेव अभी सोच रहा था कि कहीं से प्रकाश हुआ और रास्ता चमकने लगा। उसने सोचा कि कंस को मालूम हो गया होगा कि वह लड़के को ले जा रहा था । उसने लोगों को मशालें देकर भेजा होगा। यह उसी का प्रकाश

होगा। आत्मरक्षण के लिए उसने तलवार निकाली। पीछे देखा कोई न था। रास्ते को चमकानेवाला प्रकाश लड़के से निकल रहा था।

वह जल्दी ही यमुना किनारे पहुँचा। यमुना नदी में भँवरें उठ रही थीं। उसमें बड़े बड़े साँप और मगर थे। परन्तु भयभीत होने का समय न था। नदी पार करके जाना ही होगा। वासुदेव ने नदी में पैर रखा था कि नदी विभक्त सी हो गई और लहरों ने रास्ता छोड़ दिया।

वासुदेव शिशु को लेकर परली पार गया। वहाँ एक बढ़ के पेड़ के निकट पहुँचा। पास ही उसके मित्र नन्द का ग्राम था। कंस की आज्ञा पर उसने कभी उस नन्द को मारा था। उसे जञ्जीरों से बाँधा था। वासुदेव ने सोचा कि अच्छा होगा, यदि वह अपने लड़के को नन्द को पालने के लिए दे सके।

ठीक उसी समय एक मरी बच्ची को लेकर जञ्जीरों के साथ नन्द वहाँ आया। हुआ यह था कि कुछ देर पहले उसकी पत्नी यशोदा एक लड़की को जन्म देकर बेहोश हो



गई थी। उसे यह भी न मालूम था कि उसने लड़के को जन्म दिया था या लड़की को। यह लड़की पैदा होते ही मर गई थी। अगले दिन ग्राम में इन्द्र यज्ञ नामक उत्सव होनेवाला था। अगर यह मालूम हो गया कि नन्द के लड़की हुई थी और मर गई थी, तो उस शोक में उत्सव नहीं मनाया जायेगा। इसलिए नन्द मृत लड़की को फेंकने के लिए अन्धेरे में यमुना किनारे आया था।

नन्द को कुछ गुनगुनाता सुन, बासुदेव ने पूछा-"कौन है? क्या यह मेरा मित्र नन्द ही है?"



कि उसकी पत्नी ने एक लड़की को जन्म दिया था और वह पैदा होते ही मर गई थी। कहीं ऐसा न हो कि अगले दिन इन्द्रोत्सव में बाधा पहुँचे मैं इस शिशु को फेंकने आया हूँ।

वासुदेव ने अपने शिशु के बारे में कहा-"कंस पहले ही मेरे छः बच्चों को मार चुका है। यह सातवाँ है। इसे ले जाकर पालो।"

"अगर यह बात कंस को मालूम हो गई तो? क्या वह मेरा खोपड़ा नहीं तोड़ देगा?" परन्तु तुरन्त वह वासुदेव का कहा करने के लिए मान गया।

किन्तु मृत शिशु को उठाने के कारण वह मैला हो गया था। इसलिए उसे लगा कि बिना स्नान किये वासुदेव के लड़के को छूना उचित न था। इतने में पाताल गङ्गा ने आकर उसको स्नान करवाया। फिर नन्द ने वासुदेव के लड़के को हाथ में उठाकर कहा-"कितना भारी है!"

इतने में विष्णु के सेवक गुसत्य शंख, चक्र, शार्च, कौमोदकी आदि ने

पहले यह सोच कि भूत या पिशाच उसे बुला रहे थे, नन्द को डर लगा। फिर आवाज़ पहचान कर पूछा-"वासुदेव है क्या? फिर भी, उससे मुझे क्या काम है? कंस ने मारने के लिए कहा तो उसने मुझे मारा। मुझे जञ्जीरों से भी बाँध दिया। छी....छी.... मैं भी क्यों यों सोच रहा हूँ। राजाज्ञा का धिक्कार न कर सका, इसलिए मुझे मारा। नहीं तो उसने कितनी बार मेरा उपकार किया था।" सोचता सोचता वह वासुदेव के पास पहुँचा।

"नन्द, हालचाल ठीक हैं न? क्यों, कहो न?" बासुदेव ने पूछा। नन्द ने वासुदेव को प्रणाम किया। बताया

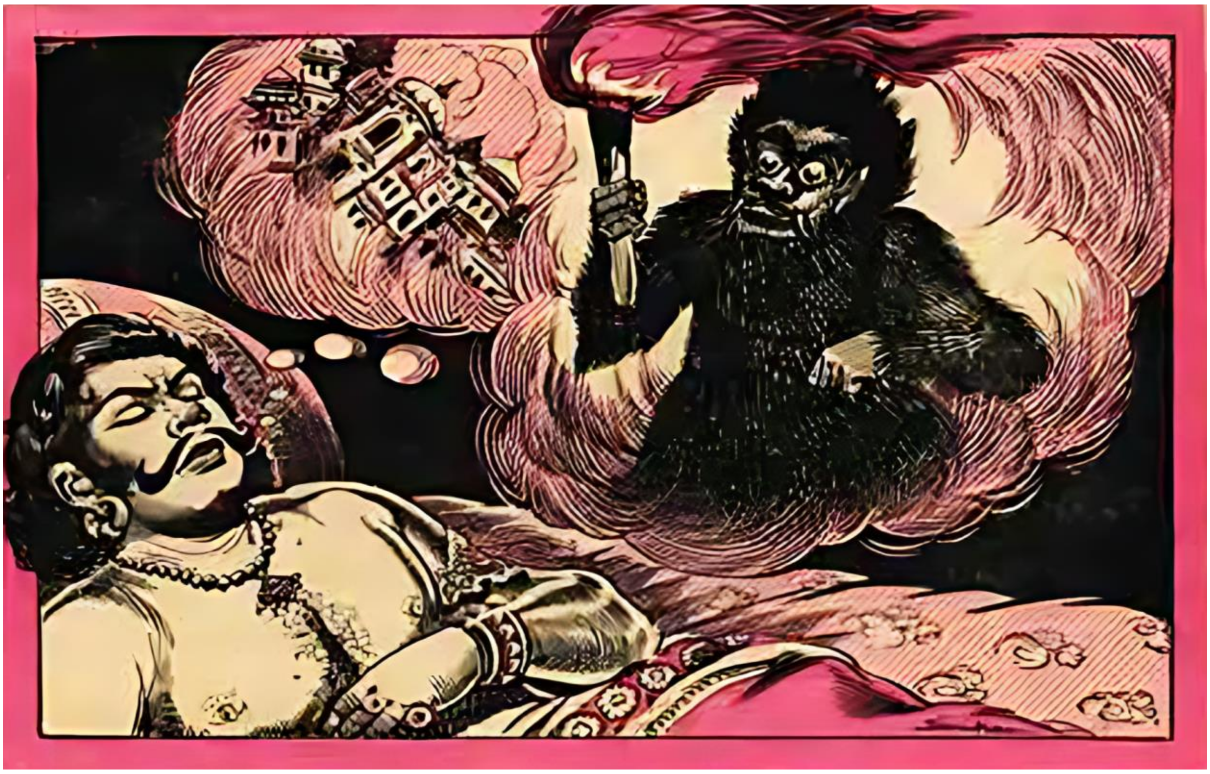
आकर बच्चे को नमस्कार किया। नन्द ने भी प्रणाम किया। तुरन्त उसकी जञ्ज़ीरें हट गईं। "नन्द, पता नहीं, तुम मेरे लड़के को कैसे पालोगे?" वासुदेव ने पूछा।

"बस, समझ लीजिये कि आपका लड़का, हमारे ग्राम का अधिपति है। चाहे किसी भी घर जाये दही, दूध, मक्खन लस्सी ज़रूर पायेगा।" नन्द ने कहा।

फिर दोनों अपने अपने रास्ते चले गये। मथुरा वापस जानेवाले वासुदेव को शिशु का रोना सुनाई दिया। जब इधर उधर देखा, तो पता लगा कि नन्द की लड़की जीवित हो गई थी और रो रही थी। वासुदेव को एक ख़याल आया। उस लड़की को देवकी की बगल में बिठाकर कंस को धोखा दिया जा सकता था। वह उस लड़की को लेकर मथुरा पहुँचा।

* * * *

उस दिन राजमहल में कंस नींद में खराब सपने देख रहा था। राजमहल ढह रहे थे। भूमि इस तरह धक्के खा रही थी, जैसे नाव तूफ़ान में खाती है। काली कलूटी मातङ्ग स्त्रियाँ, कंस से शादी करने





के लिए कह रही थी। उसने उनको धिक्कार दिया। इतने में एक भयङ्कर आकृति ने आकर कहा-"कंस, में मधूक महामुनि का शाप हूँ। मैं तुम में प्रविष्ट होने जा रहा हूँ। तुम्हारे अच्छे दिन लद गये हैं।" उस शाप ने कंस के भाग्य को बुलाकर कहा-"अब तुम्हारे लिए यहाँ स्थान नहीं है। तुम जाओ।"

कंस उठा। यशोधरा नाम की दासी को बुलाकर पूछा-"क्या मातङ्ग स्त्रियाँ अन्दर आई थी?" सेविका ने कहा-"नहीं तो।" कंस ने बालाकी को बुलाकर कहा-"पुरोहित के पास जाकर मालूम करो कि मूकम्पन और उल्कापात, आन्धी आदि का क्या कारण है।"

बालाकी ने वापस आकर कहा-"महाराज, पुरोहित का कहना है कि आज संसार में आदिपुरुष का अवतरण हुआ है।" कंस ने कहा-"तो यह भी मालूम करो कि वह भगवान किसके घर पैदा हुआ है? और क्यों पैदा हुआ है?" बालाकी गया और आकर उसने बताया-"महाराज, देवकी ने एक लड़की को जन्म दिया है।" कंस को इस पर विश्वास न हुआ। उसने सोचा कि बासुदेव अवश्य सच बतायेगा। इसलिए उसको बुलाया। प्राण रक्षा के लिए, कहा गया है, असत्य भी सत्य के समान है, यह सोच वासुदेव ने कहा कि उसकी पत्नी ने एक लड़की को जन्म दिया था।

"लड़का हो या लड़की हो, उसे मरना ही होगा।" कंस ने कहा। बहुतों ने कहा, पर उसने किसी की न सुनी।

"अरे, मैं किसी और की सन्तान को कैसे मरने दूँ? क्या मैं अपने लड़के को फिर ले आऊँ?" वासुदेव ने सोचा। यह सोच कि वह लड़की एक समय मरी हुई

थी इसलिए उसको कोई हानि नहीं पहुँचेगी, वह देवकी को आश्वासन देने गया।

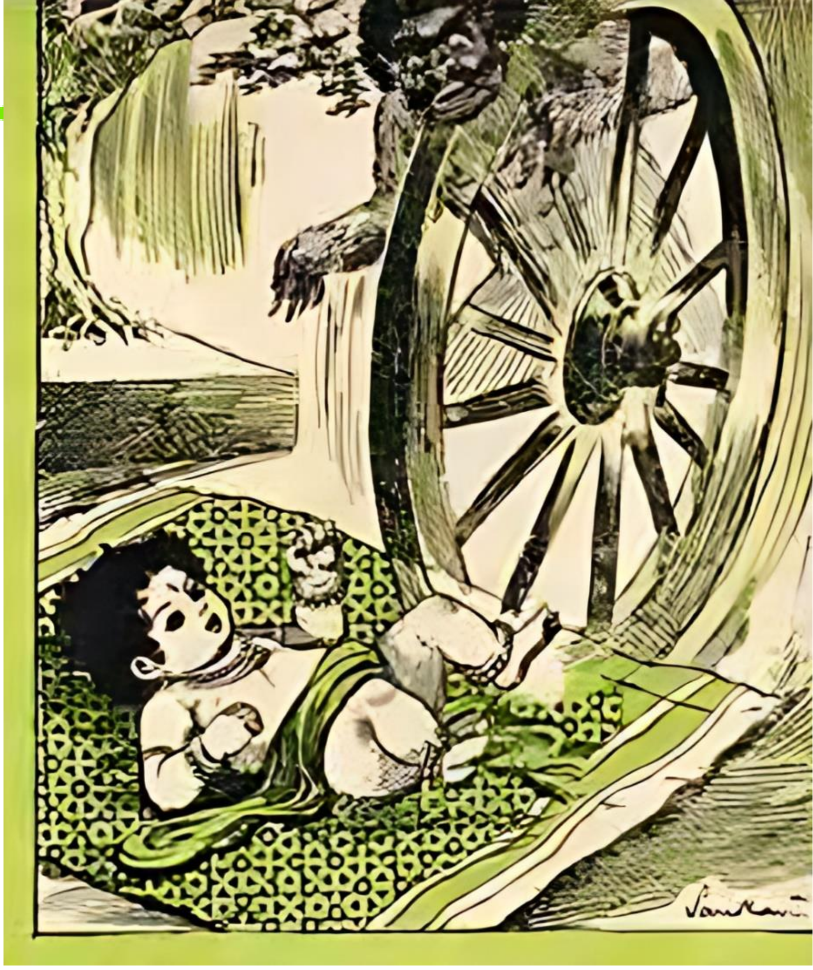
कंस ने देवकी के यहाँ से बच्ची मँगवाई। उस लड़की में शुभ लक्षण देखकर, उसे मारने की इच्छा न हुई। परन्तु मुनि का शाप था कि देवकी की सातवीं सन्तान उसके प्राण लेगी। जब तक यह मर न जायेगी, तब तक मुझे शान्ति न मिलेगी। उसने उस लड़की को शिला पर दे मारा। तुरन्त कात्यायिनी ने प्रत्यक्ष होकर कहा- "कंस! तेरे नाश के लिए मैं वासुदेव के वंश में पैदा हो चुका हूँ।"

सवेरा होनेवाला था। कंस ने आनेवाले अशुभों का निवारण करना चाहा।

*   *   *   *

जब से नन्द के घर कृष्ण का जन्म हुआ था, तब से गौवों का, गोपालकों का जीवन आनन्दमय हो गया था। वृन्दावन में रौनक ही रौनक थी।

गोपालक, कृष्ण के बारे में कथायें कहने सुनने लगे। वह अभी दस दिन का था कि उसको मारने के लिए पूतना आई। पर जब उसने



उसका दूध पिया तो वह दुष्ट मर गई। महीने भर का था कि उसने शकटासुर को मार दिया। यह देख कि वह अड़ोस-पड़ोस के घरों से मक्खन चुरा रहा था, यशोदा ने उसको ओखल से बाँध दिया। वह ओखल को दो पेड़ों के बीच ले गया और उनको ध्वंस कर दिया। पर इन वृक्षों में चमल-अर्जुन दो राक्षस छुपे हुए थे, वे नष्ट हो गये।

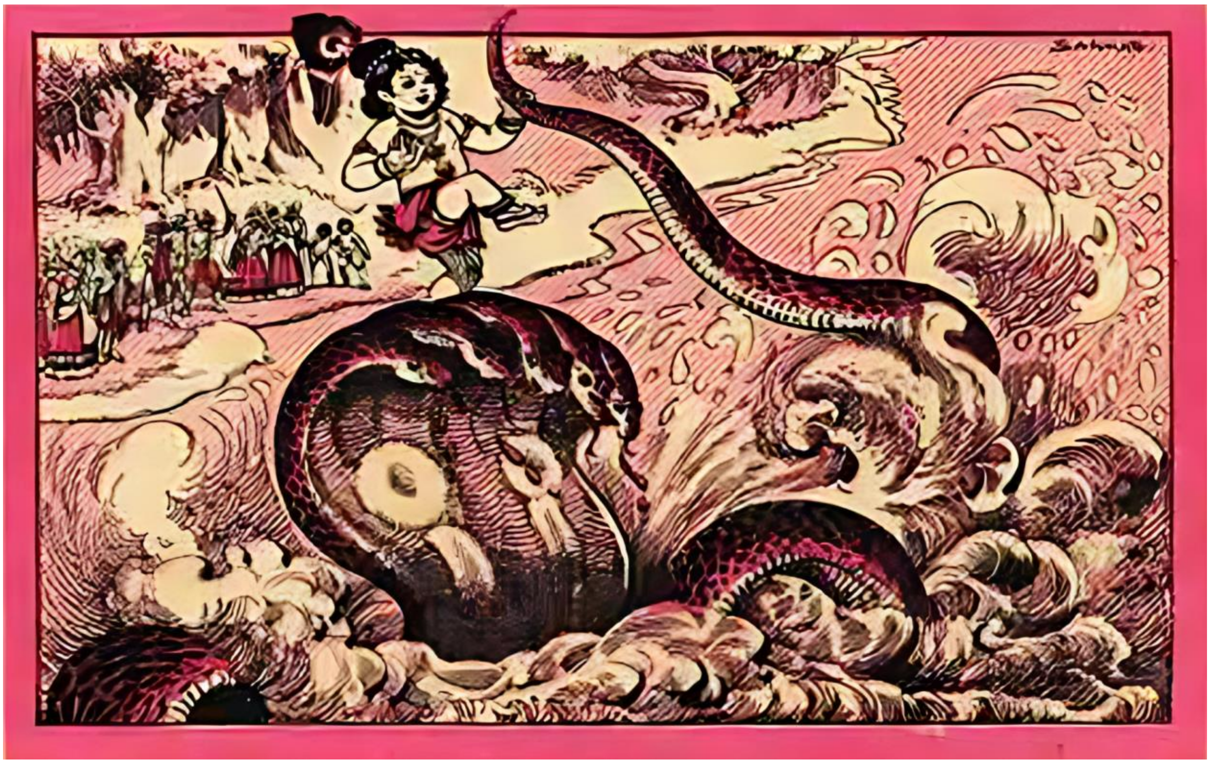
एक बार प्रलम्ब नाम का राक्षस नन्द के वेष में बलराम को ले जाने लगा। बलराम जान गया कि उसे कोई ले जा रहा था। उसने जोर से उसकी आँखों पर

घूसा मारा। वह मर गया। फिर ताड़ के बाग में धेनुक नाम का राक्षस गधे के रूप में आया। कृष्ण ने उसका दायाँ पैर पकड़ा उसे नीचे फेंककर मार दिया।

इसी तरह केसी नाम का राक्षस घोड़े के रूप में आया। पर ज्योंहि कृष्ण ने उसके मुख में कपूर रखा तो उसके दो भाग हो गये और वह मर गया।

एक दिन गोपिकायें और गोपालक आनन्द से नृत्य कर रहे थे कि अरिष्टवृषभ आया। उनमें कुहराम मच गया, कृष्ण ने उसका मुकाबला किया, उससे युद्ध करके उसे मार दिया। इतने में कुछ गोपालकों ने आकर कृष्ण को बताया कि बलराम काली से युद्ध करने गया हुआ था।

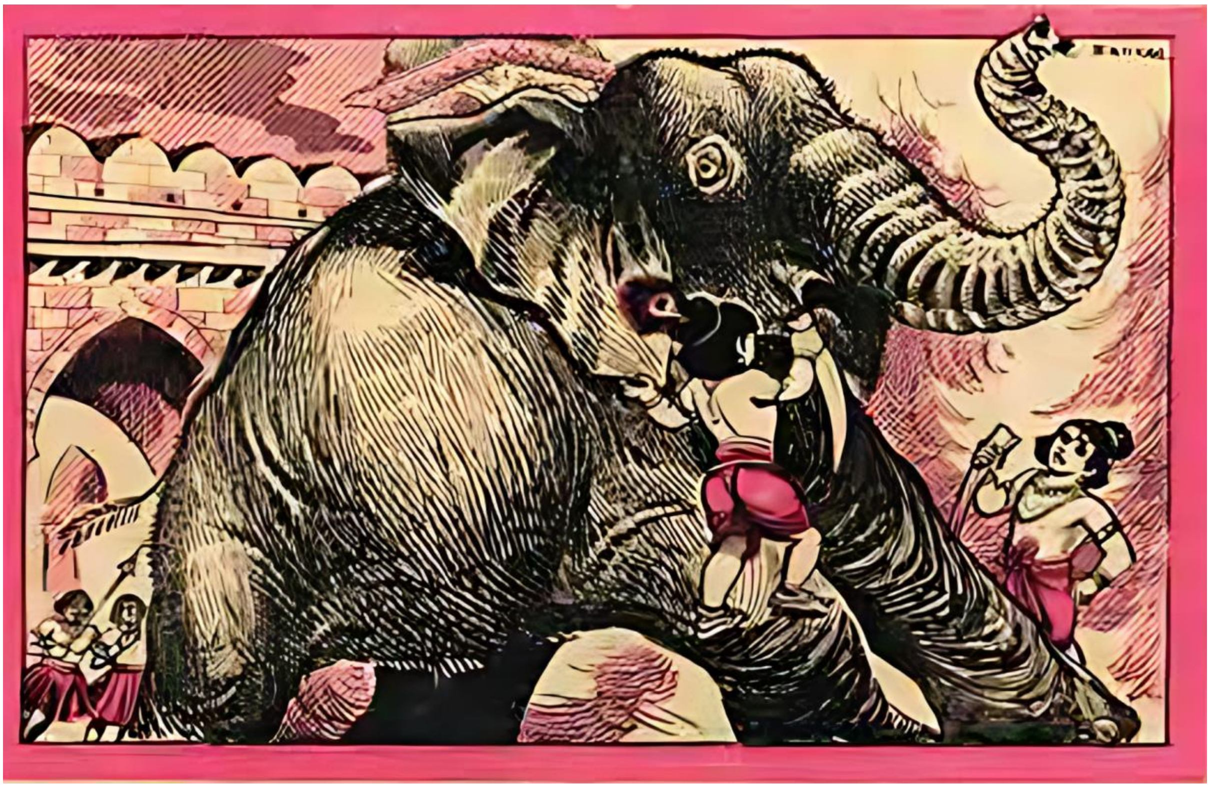
काली का अभिमान नाश करने के लिए कृष्ण यमुना में उस स्थान पर गया, जहाँ काली रहा करता था। गोपिकाओं ने बहुत मना किया कि वह नदी में न उतरे। फिर भी कृष्ण उतरा। किनारे पर खड़े एक वृद्ध ने कहा-"अरे, अरे उसमें न घुसो, पानी पीने के लिए जब शेर चीते, जङ्गली सूअर, हाथी भी गये तो फिर वे वापस न आये। तुम न जाओ।"



कृष्ण ने काली के पाँचों सिरों को पैरों तले रौंदा। काली ने कृष्ण की शरण माँगी। उसने वहाँ से जाना स्वीकार कर लिया। "तेरे सिर पर मेरे पद-चिन्ह देख गरुत्मन्त तेरा कुछ न बिगाड़ेगा।" कृष्ण ने कहा ।

इतने में एक सैनिक आया। "मथुरा नगर में कंस महाराजा धनुर्मह उत्सव मना रहे हैं, उसमें कृष्ण और बलराम को सपरिवार बुलाया गया है।" सैनिक ने कृष्ण को यों निमन्त्रण दिया। मथुरा में कंस, कृष्ण और बलराम की प्रतीक्षा कर रहा था। यह देख कि वे बड़े पराक्रमशाली थे। उनका नाश करने के लिए उसने सब प्रबन्ध किये हुए थे।

कृष्ण और बलराम मथुरा आये। उन्होंने राजा के धोबी से कपड़े छीन लिए। उनको मारने के लिए मन्त्री ने हाथी भेजे। कृष्ण ने उनके दान्त निकाल फेंके और उनसे उनको मार दिया। रास्ते में मदनिका नाम की कुबड़ी दिखाई दी। उससे अगर ले लेकर अपने शरीर पर रगड़ लिया। फिर जब उसने उसके शरीर को छुआ तो मदनिका का कुबड़ापन



जाता रहा और वह मामूली स्त्री हो गई। कृष्ण फूल मालायें लेकर गले में डालकर धनुशाला में गया। जब उसके रक्षक सिंहल ने उसे रोका तो उसे मारकर उसके बाण के दो टुकड़े कर दिये। वहाँ से वह स्यामवन गया। ये सब बातें कंस को मालूम हो गयी थीं। उसने बलराम और कृष्ण को मारने के लिए चाणूर और मुष्टिक नाम के मल्लों को तैयार रखा।

बलराम और कृष्ण आये। सैनिक ने उनसे कहा-"वे ही महाराज हैं। प्रणाम करो।"

"वे किसके महाराजा हैं?" उन्होंने पूछा।

"सारे संसार के।" सैनिक ने कहा।

"हम नहीं देखेंगे।" उन्होंने कहा।

कंस ने कृष्ण को देखते हुए सोचा- "क्या यही कृष्ण है! बड़े बड़े मोटे मोटे हाथ, जाँघें। मदमत्त हाथी की तरह मालूम होता है। तुमने यह सब काम किया है, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है । यह संसार को हिला देनावाला मालूम होता है।

उसके आज्ञा देते ही चाणूर और मुष्ठिका कृष्ण बलराम से कुश्ती करने लगे। क्षण भर में वे दोनों मारे गये। कृष्ण सिंहासन की ओर लपका।

"इस कंस को मैं अभी यमपुरी भेजता हूँ।" उसने कंसः का सिर खींचा। कंस नीचे गिरकर मर गया।

यह देख कंस के नौकरों ने कृष्ण और बलराम पर हमला करने का प्रयत्न किया। बलराम और कृष्ण उनका मुकाबला करने के लिए भी तैयार हो गये। परन्तु वासुदेव ने उनसे कहा-"ये दोनों ही मेरे बच्चे हैं। यह रोहिणी पुत्र है, और यह देवकी पुत्र। तुम इनका कुछ न बिगाड़ो।" उसने लोगों से कहा। उसने कैद से उग्रसेन को भी छुड़ाया और उसका फिर से पट्टाभिषेक करवाया।





केफिङ्ग में चिन नाम का एक व्यापारी रहा करता था। वह सवेरे जो उठता, शाम तक धन कमाने में लगा रहता। इस तरह कमा कमाकर जब उसने बहुत-सा धन इकट्ठा कर लिया, तो उसने उसको सुरक्षित रखने के लिए एक उपाय सोचा। जो फुटकर पैसे थे, उनको अपने स्वर्च के लिए रख लिये। फिर चान्दी लेकर उसे पिघाल लिया और पन्द्रह सेर की सिलें बना ली।

इस तरह जो उसने सालों से चान्दी इकट्ठी की थी- उनकी आठ सिलें बनीं। इससे अधिक धन बह इकठ्ठा न कर सका। क्योंकि उसके बाद, वह जितना पैसा कमाता उतना खर्च भी कर देता। इन आठों सिलों को लाल रस्सियों से बाँध कर अपने सिरहाने, तकियों के साथ रखा करता। सोने से पहिले वह उनको छूकर देखता और सन्तुष्ट होता।

चिन के चार लड़के थे। उन्होंने अपने पिता के सतरहवें जन्म दिवस पर बड़ी दावत दी। उसका सम्मान किया। उसने उनसे प्रेम से कहा- "बेटो! मैं जिन्दगी भर कमाता रहा ताकि हमें किसी चीज़ की कमी न हो। मैंने जितना धन इकट्ठा किया, वह सब बड़ी-बड़ी चान्दी की सिलों में है। लाल रस्सियों से बाँधकर, मैंने उनके चार गट्ठर तैयार कर रखे हैं। अच्छा दिन देखकर तुम चारों को चारों गट्ठर में सौंप दूँगा। उनको तुम खो न देना। जीवन-भर उनको अपने पास रखना।" चिन के लड़के बड़े खुश हुए।

चिन उस दिन जब रात को बिस्तर पर लेटा, तो उसने सिर के पास आठ

इन्दु भटनागर



सिलों को हाथ से टटोलकर देखा। फिर मन ही मन हँसा और आँखें बन्द करके सो गया।

इतने में कमरे में आहट हुई। उसे लगा कि कमरे में लोग थे। उसने पलङ्ग को हटाकर देखा। कमरे में दीया जल रहा था। उसकी रोशनी में चिन को आठ डील-डौल आदमी दिखाई दिये। उन्होंने सफेद कपड़े और लाल कमरबन्द पहन रखी थी। चिन को देखकर, उन्होंने पास आकर प्रणाम किया-"बाबू! हम भाई भाई हैं। हमें भगवान ने आपके पास भेजा था। अब तक हमसे आपने कोई काम भी न करवाया और हमको अपने पास आदरपूर्वक रखा।

अब आपका समय समाप्त होनेवाला है। हमने सोचा था कि हम आपके साथ अन्तिम क्षण तक रहेंगे। पर हमें मालूम हुआ है कि आप हमें अपने लड़कों को सौंपने जा रहे हैं। क्योंकि हम उनकी सेवा नहीं कर सकते हैं, इसलिए आपसे विदा लेकर हम जाने के लिए आये हैं। हम पास के फलाने ग्राम में वाङ्ग के पास जा रहे हैं। फिर कभी हम मिलेंगे।" उन्होंने कहा। और वे पीछे मुड़कर कमरे से फौरन चले गये।

बूढ़ा चिन आश्चर्य और भ्रान्ति में पलङ्ग से नीचे कूदा। जाते हुए उन आठों आदमियों के पीछे चला। उस जल्दबाजी में उसको ठोकर लगी और वह गिर गया। जब उसने आँखें खोलीं तो वह अपने बिस्तर पर ही था। उसे लगा कि उसने कोई स्वप्न मात्र देखा था।

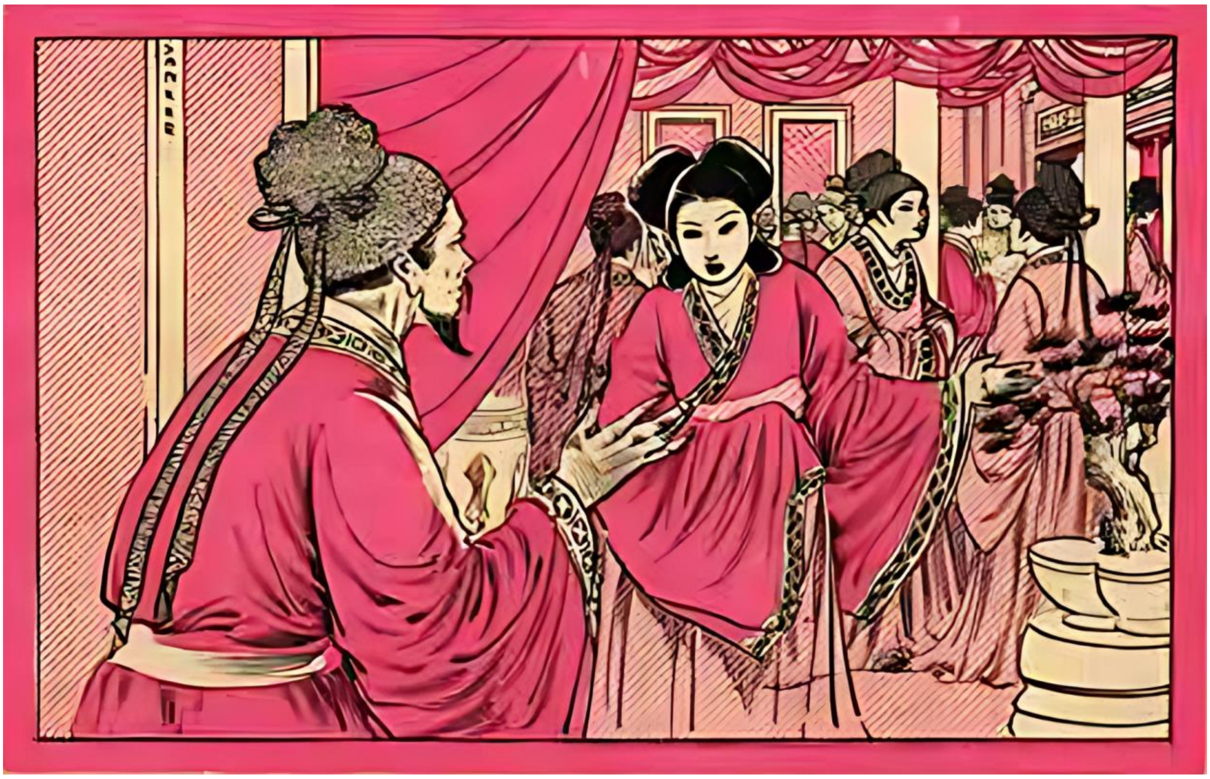
चिन पलङ्ग से उतरा। रोशनी बढ़ाई, और अपने तकिये के आसपास उसने हाथ से टटोला।

जो कुछ उसने सपने में देखा था, सुना था, उसे याद करके उसने सोचा कि सपना सच था। उसे बुरा लगा कि मेहनत से कमाया हुआ धन किसी और के पास जा रहा था। क्योंकि वह जानता था कि वाङ्ग फलाने गाँव में रहता था, इसलिए उसने इस बात की तहकीकात करने की ठानी।

चिन उस दिन रात को फिर न सो सका। सवेरा होते ही वह उस गाँव में गया और उसने वाङ्ग का घर ढूँढ़ निकाला। बाङ्ग के घर कोई उत्सव सा मनाया जा रहा था। चिन के अन्दर जाते ही वाङ्ग ने उसका अतिथि सत्कार किया।

"आज आपके घर क्या हो रहा है?" चिन ने वाङ्ग से पूछा।

"कुछ नहीं। मेरी पत्नी बहुत दिनों से बीमार थी। कल जब ज्योतिषी से पूछा तो उसने कहा कि जबतक उसका पलङ्ग हिला न दिया जाये तो यह ठीक न होगी। कल रात को मेरी पत्नी को एक सपना आया। उसमें आठ आदमी दिखाई दिये। उन्होंने बताया कि वे अब तक चिन के यहाँ नौकरी कर रहे थे और अब हमारे घर



नोकरी करने आये हैं। फिर वे मेरी पत्नी के पलङ्ग के नीचे घुस गये। तुरत मेरी पत्नी को खूब पसीना आया और बीमारी जाती रही। आज जब उसका पलङ्ग हटाया तो उसके नीचे लाल रस्सियों से बँधी आठ चान्दी की सिलें दिखाई दीं। वे वहाँ कैसे आई, यह नहीं मालूम हो रहा है। क्योंकि भगवान की दया से हमें ये मिली हैं, इसलिए हम उसकी उपासना कर रहे हैं।" वाङ्ग ने कहा।

चिन ने अपनी सारी कहानी वाङ्ग को सुनाकर पूछा-"अगर भगवान को यही पसन्द हो तो मैं भला क्या कर सकता हूँ? पर क्या आप मुझे एक बार उन सिलों को दिखा सकेंगे?"

वाङ्ग ने उन सिलों को नौकरों द्वारा मँगाकर चिन को दिखलाया। उन्हें देख बूढ़ा चिन आसू बहाने लगा।

वाङ्ग को बूढ़े पर बड़ी तरस आई। उसने दस तोले चान्दी लेकर कहा "रखो"।

उसने उसे चिन को देना चाहा। उसने जिसने कि इतनी सारी चान्दी खो दी थी थोड़ी-सी चान्दी लेनी न चाही। वाङ्ग ने जबर्दस्ती उसको चिन के कुड़ते की आस्तीन में रख दिया। चिन ने उसको वापस देने के लिए आस्तीनें टटोली। पर चान्दी कहीं न दिखाई दी। आखिर यह विदा लेकर चला गया।

उसके बाद वाङ्ग के नौकर जब घर साफ कर रहे थे, तो देहली के नीचे उनको दस तोले चान्दी दिखाई दी। चिन के आस्तीन में छिद्र था। वाङ्ग ने जब चान्दी अन्दर रखी, तो वह उस छिद्र में से नीचे गिर गई और देहली के पास लुढ़क गई। आखिर चिन का भाग्य कुछ ऐसा ही था।





प्रायः बड़े बड़े कवि, राजा भोज का दर्शन करने आते। अपनी कविता से उसको सन्तुष्ट करते और ईनाम पाकर जाते। परन्तु राजा भोज के समय में धारा नगर में मामूली आदमी भी बड़ी बड़ी कविताएँ किया करते थे। इनके बारे में राजा भोज की अपेक्षा और अच्छी तरह जानते थे। यह कहा जाता था कि राजा भोज के काल में हर किसी के मुख में सरस्वती थी। पर राजा भोज स्वयं यह प्रत्यक्ष रूप से नहीं जानता था।

एक दिन राजा भोज जङ्गल में शिकार खेलकर धारा नगर वापस आते आते थक गया और पेड़ की छाया में खड़ा हो गया। उस समय एक ग्वाले की लड़की सिर पर हण्डा रखकर धारा नगर की तरफ जाती दिखाई दी। यह सोचकर कि उस हण्डे में प्यास बुझाने के लिए कुछ होगा, राजा भोज ने पूछा- "क्यों, इसमें क्या क्या है?"

तुरन्त ग्वालिन ने राजा भोज को पहचान लिया। वह जान गई कि उसने यों क्यों पूछा था। इसलिए उसने यह उत्तर दिया।

'हिम कुन्द शक्षिप्रम शंखनिर्भ

परिपक्क कपित्थ सुगन्धरसं

युवती करपइव निर्मथितं

पित्र हे नृपराज रुजापहरं। "

[ओस, चमेली, चान्दनी, शंख की तरह सफेद। कपित्थ के फल की तरह सुगन्धित, स्त्री के कोमल हाथों से मथित, श्रम का निवारण करनेवाली (लस्सी), हे राजेन्द्र, प्यास बुझाओ।]

राजा भोज ग्वालिन की प्रतिभा देखकर चकित हुआ। उसके हण्डे से लस्सी पीकर उसको उसने उचित ईनाम दिया।

एक बार राजा भोज राजोद्यान की ओर जा रहा था कि एक जङ्गली लड़की सामने आई। उसके हाथ में थोड़ा माँस था। वह बहुत थकी और भूखी मालूम होती थी। राजा भोज ने उससे बात शुरु की। दोनों में इस प्रकार कवित्व सम्भाषण हुआ:

भोज: त्वं कस्य पुत्री? (तुम किसकी लड़की हो?)

जङ्गली: नरेन्द्र, लुब्धकवधू (राजा, जङ्गलियों की लड़की हूँ।)

भोज : हस्ते किमेतत्? (हाथ में यह क्या है?)

जङ्गली: पलं (माँस)

भोज: क्षामं किं? (इतना कम क्यों है?)

जङ्गली: सहजं प्रवीमि नृपते।

यद्यादरा बृछरुयते

गायन्ति त्वदरि प्रियाश्रुतटिनी

तीरेषु सिद्धाङ्गना

गीतान्यानतृणं चरन्ति हरिणाः

तेनामिषं दुर्लभं!

[अगर राजा, आपने बिना बुरा माने सुना तो सच बताती हूँ। आपके शत्रुओं की पत्नियों के आँसुओं की नदियों के किनारे सिद्धाङ्गनाओं का सङ्गीत सुनते हरिण घास तक नहीं खाते हैं। तब माँस कहाँ से मिलेगा?]

एक ऐसी लड़की को जिसके पास खाने को भी न था, इतनी अच्छी कविता बनाता देख, राजा भोज बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसने अपने सारे गहने उतारकर ही न दिये, बल्कि श्लोक के प्रत्येक अक्षर के लिए एक एक लाख मोहरें भी ईनाम में दीं।





मैं कौन हूँ? कब पैदा हुआ? मैं किनका हूँ? यह सब मैं नहीं जानता।

जब से होश सम्भाली है, मैं आकाश में अकेला हूँ। जहाँ मैं हूँ, वहाँ आकाश बहुत सुन्दर दीख पड़ता है। वह कतई काला है और उसमें चमचमाते तारे हैं। वहाँ सूर्य धीमे धीमे घूमता मालूम होता है। सूर्य से निकलनेवाली लपटें उमड़नेवाले तूफ़ान सब मुझे दीखते रहते हैं।

आकाश में सूर्य घूमता है, तारे घूमते हैं, ग्रह घूमते हैं.... पर एक भूमि ही है, जो मेरे सामने स्थिर-सी खड़ी रहती है। जब सूर्य आता है, तो मुझे भूमि दिखाई भी नहीं देती। जब सूर्य नहीं दीखता तो भूमि ही प्रकाश देती-सी लगती है।

क्या तुम जानते हो, सूर्य जब छुप जाता है और जब तक फिर उगता नहीं है, वह मेरे लिए रात्रि है! ठीक आधी रात में गोल गोल-सी भूमि प्रकाशमय हो उठती है। सूर्य के उदय होने का समय जब आता है तो भूमि का आधा भाग अन्धकार में विलीन लगता है। सूर्योदय से सूर्यास्त तक मेरे लिए दिन है। ठीक मध्यान्ह में मुझे भूमि दिखाई नहीं देती। पर कभी कभी ठीक दुपहरी में मैं भूमि देख भी लेता हूँ। मालूम है कैसे? सूर्य भूमि की आड़ में चला जाता है।

और आधी रात में जब सामने चमकने वाली भूमि धुन्धली होने लगती है, तो मुझे थोड़ा डर लगता है। जानते हो तब क्या होता है? भूमि और सूर्य के बीच मैं आ जाता हूँ। यानि भूमि पर मेरी छाया पड़ती है। तो क्या है थोड़ी देर बाद मेरी छाया से भूमि निकल पड़ती है और हमेशा की तरह चमकने लगती है।

एक बार ऐसा हुआ कि मेरे पास कुछ आदमी आये। मैंने उनको नमस्कार करके पूछा-"महाशयो! मैं कौन हूँ? मैं कब पैदा हुआ? कौन मेरा स्रष्टा है?" उन्होंने मेरा जन्मवृत्तान्त यों बताया:

"कहते हैं, कभी देवताओं और दानवों ने अमृत के लिए क्षीरसागर को मथा था। क्षीरसागर को मथने के लिए कितनी बड़ी मथनी चाहिए। और कितनी बड़ी रस्सी की आवश्यकता होगी? बताया जाता है कि उन्होंने मन्दर पर्वत को इस काम के लिए मथनी बनाया और सर्पराज वासुकी से रस्सी का काम लिया। पहले पहल हालाहल



निकला और जब उसके कारण सारा संसार समाप्त होने लगा, तो भगवान ने आकर उसको स्वयं निगल लिया।

उसके बाद, सुनते हैं, क्षीरसमुद्र से लक्ष्मी, में और इन्द्र का वाहन ऐरावत और आखिर अमृत पैदा हुआ।

क्षीरसागर के मथे जाने पर तुम भूमि के पेट से पैदा हुए। अमृत क्योकि तुम्हारा सहोदर है, इसलिए तुम्हें देखकर भूमि निवासी निहाल हो उठते हैं।" उन्होंने मुझसे कहा।

कहते हैं, क्षीरसागर से अमृत निकला कि नहीं कि दानव और देवता उसके लिए आपस में भिड़ पड़े। तब देवताओं के समर्थक विष्णु, मोहिनी का रूप धारण कर वहाँ आये। उन्होंने देवताओं को एक पंक्ति में और राक्षसों को एक पंक्ति में बिठाया। देवताओं को एक एक करके अमृत देने लगे। यह सोचकर कि अमृत उस तक न पहुँचेगा, राक्षसों की पंक्ति में बैठा राहु नामक राक्षस धीमे से खिसककर देवताओं की पंक्ति में जा बैठा। विष्णु



यह नहीं जान सके। मैं पास बैठा था। मैंने आँखों से इशारा किया। तुरन्त विष्णु ने चक्रायुध मँगाया और इससे पहले कि राहु अमृत निगल पाता, उसका गला काट दिया। राहु तो मर गया, पर क्योंकि उसके सिर ने अमृत पिया था, इसलिए वह जीवित रहा। यह याद करके मैंने ही उसको पकड़वाया था, वह कभी कभी मुझे निगलता रहता है। कहते हैं तब में अपनी माँ को नहीं दिखाई देता। परन्तु मैंने इस राहु को कभी नहीं देखा है। जब मेरे बहु-दामाद यह सोचते हैं कि राहु मुझे निगल गया है, तब मुझे ठीक दुपहरी में भी सूर्य दिखाई नहीं देता। बस यही होता है और कुछ नहीं।

परन्तु ऋषि मुनियों ने जो कुछ कहा है, उसे मैं नहीं ठुकराना चाहता। सचमुच भूमि मेरी माँ ही होगी, नहीं तो हमेशा मेरे सामने क्यों रहती है?

माँ मेरे सामने तो रहती है, मुझे वह अपने को हर तरफ से देखने भी देती है। परन्तु मैं हमेशा माँ को ही देखता रहता हूँ। कभी अपनी पीठ नहीं दिखाता। मेरी माँ समुद्र की लहरों से हमेशा मुझे सहलाने की



कोशिश करती है। मेरे बारे में एक और कहानी है।

एक दिन विघ्नेश्वर पेट भर खाकर, अपने पिता परमेश्वर के पास जा रहा था। पेट इतना फूला हुआ था कि वह लड़खड़ा रहा था।

उसको लड़खड़ाता देख में हँस पड़ा। तब विघ्नेश्वर को इतना गुस्सा आया कि उसका पेट फूट पड़ा। फिर सापों द्वारा उसका पेट सी दिया गया। यह देख कि मैं उसके लड़के पर हँसा था, पार्वती ने मुझे शाप दिया कि जो कोई मुझे देखेगा उसकी निन्दा होगी।



यह सुन देवता बड़े घबराये। पार्वती के पास गये। उससे विनती की। तब उन्होंने कहा कि यह शाप केवल विनायक चौथ के दिन ही लगेगा। क्योंकि कृष्ण ने मुझे विनायक चौथ के दिन देखा था, इसलिए कृष्ण की निन्दा हुई कि उसने श्यामन्तक मणि चुराई थी। कहानी यों है।



सत्रजित नामक व्यक्ति सूर्य से श्यामन्तक मणि ले आया, जो रोज दस हाथ सोना देती थी। जब कृष्ण ने उससे वह मणि माँगी तो उसने देने से इनकार कर दिया, इसके कुछ दिनों बाद सत्रजित का भाई प्रसेन, उस मणि को लेकर जङ्गल गया। तब एक शेर उसको मारकर वह मणि ले गया। तब जाम्बवन्त ने उस शेर को मारकर श्यामन्तक मणि को अपनी लड़की जाम्बवती को दी।

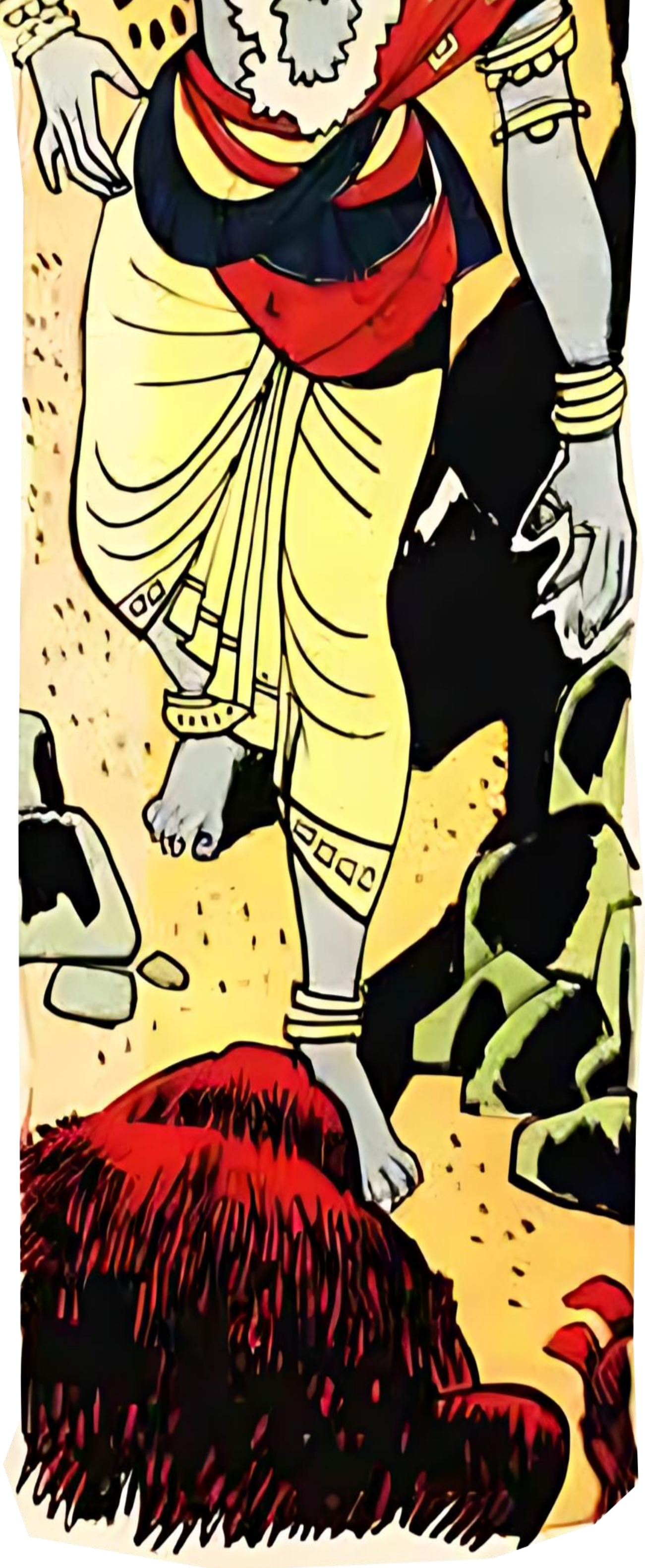
परन्तु कहा यह गया कि कृष्ण ने प्रसेन को मारकर मणि ले ली थी। कृष्ण निरपराधी था, पर इस बदनामी से बचने के लिए उसने "जासूस" का काम किया।



प्रसेन जहाँ मरा था वहाँ से शेर के पैरों के चिन्ह दिखाई दिये। उन चिन्हों पर जब चलता गया तो मरा शेर दिखाई दिया। वहाँ से जाम्बवन्त के पग चिन्ह दिखाई दिये। वह उनको देखता जाम्बवन्त की गुफा में पहुँचा। कृष्ण ने जाम्बवन्त को युद्ध में हराया। वह जाम्बवन्ती और श्यामन्तक मणि भी ले आया। श्यामन्तक मणि को सत्रजित को देकर उसने उसकी लड़की सत्यभामा से शादी कर ली। भले ही बदनामी हुई हो, पर दो सुन्दर सलोनी पत्नियाँ तो मिल गई।

* * *

तुम मेरे बारे में जानने के लिए हमेशा उत्सुक रहते हो न? मैं भी तुम जो कुछ कर रहे हो वह गौर से देखता हूँ। मैं जानता हूँ कि हजारों मीलों के फासले पर तुम क्या क्या मेरे बारे में सोच रहे हो। तुम्हारे कवियों ने मेरा कई तरह से वर्णन किया है। मेरी प्रशंसा की है।





कभी कभी दुत्कारा भी है। पर क्या है! उस दुत्कार में भी मेरे प्रति उनका अभिमान दिखाई देता है।

कितनों ने मुझे देखकर शपथें की हैं। सुन्दर स्त्रियों के मुँहों की उपमा मुझ से दी जाती है। मेरी शीतलता के लिए कितने ही छटपटाते हैं। कितनों ने ही अपने बच्चों को मेरा नाम दिया है। मेरे नाम पर कितने ही राजवंश बने। जाने कितनी ही कहानियाँ मेरे बारे में गढ़ी गई हैं। मेरे मुँह पर जो काला दाग है उसके बारे में भी न मालूम कितनी कहानियाँ हैं। मुझे देखते ही कइयों को पीपल का पेड़ और उसके नीचे चरखा चलाती कोई बुढ़िया भी दीखने लगती है। कई को खरगोश दिखाई देता है। इसीलिये मुझे शशांक भी कहा जाता है।

परन्तु वैज्ञानिकों ने ही मेरे बारे में सच जानने का प्रयत्न किया है। ज्योतिषियों ने मेरी गति की गणना कर, मासों का विभाजन किया है। बारों में, मेरा नाम भी दिया गया है.... सोमवार।

सच बताया जाये, तो और ग्रह मेरी बड़ी छोटी मौसियाँ होती हैं। परन्तु ज्योतिषी मुझे ही ग्रह मानते हैं। जब आप में से कोई पैदा होता है, तो मैं जिस नक्षत्र के पास होता हूँ, उसी को उस व्यक्ति का जन्म नक्षत्र समझते हैं।

वर्षों के अध्ययन से वैज्ञानिकों ने मेरे बारे में कुछ सामग्री इकट्ठी की है। जैसे मेरी मुटाई २,१६३ मील है। मेरी परिधि ६७९५ मील है और में आपसे दो लाख मील से अधिक दूर हूँ आदि।

उन्होंने भी कई गलतियाँ कीं, जो वे अब सुधार रहे हैं। कभी उनका ख़याल था कि जो मुझ पर काले काले दाग से दिखाई देते हैं, वे सब पहाड़ हैं और श्वेत प्रदेश समुद्र हैं। यह समझा तो समझा। उन्होंने उनके नाम तक रख छोड़े।

जब बड़ी बड़ी दूरबीनों से मुझे देखने लगे, तब उन्हें मालूम हुआ कि मुझ में पानी था ही नहीं। तब उन्होंने मेरे फोटो खींचे। आपने फोटो देखें ही होंगे।

परन्तु वैज्ञानिकों पर, मेरे कारण एक कठिनाई आ पड़ी। मैं क्यों कि अपनी माँ को कमी पीठ नहीं दिखाता, इसलिये वे माथापच्ची करने लगे कि देखें मेरी पीठ कैसी है। मैं भी यह देखने के लिए उत्सुक हूँ कि वे इस समस्या को कैसे सुलझाते हैं।

इस बीच, अब एक नई बात शुरु हो गई है। इस बारे में कुछ और कहना होगा।

पुराण काल से मनुष्य की उत्कण्ठा रही है कि जीते जी वह कैलाश और स्वर्ग पहुँच सके। इस समय कई में मुझ तक आने की प्रबल इच्छा हुई। जो न मिल सके, उसके बारे में सपने देखना स्वभाविक ही है। इसलिये कई कवियों ने काल्पनिक कहानियाँ बनाई हैं, कि लोग मुझ तक कैसे पहुँच गये। सालों से ये कहानियाँ पढ़कर लोग खुश होते आये हैं।

इतने में रोकेट के परीक्षण शुरु हुए। वैज्ञानिक ने १९५७ में एक ऐसा कृत्रिम ग्रह बनाया, जो भूमि की परिक्रमा करने



लगा। तब से मुझे आशा होने लगी है, कि मेरे दामाद और बहुयें, कभी न कभी मेरे पास आ पहुँचेंगे। इधर तो आश्चर्य का ताँता ही बँध गया। एक भाई मेरी माँ से एक मदद भी लाकर दे गया- यह मेरे बहु दामादों का पहला उपहार है। मैं इसी पर फूला न समाता था कि एक और भाई उड़ता आया, मेरी परिक्रमा करके मेरी पीठ की फोटो खींचकर वापस माँ की ओर चला गया। यह जानकर मैं खुश हूँ कि वे फोटो आपको मिल गये हैं। वैज्ञानिक यह जानकर हैरान हैं कि जो मेरे मुख पर है, वह मेरी पीठ पर नहीं है। यह गलत है, भला जो चीजें मुख पर हो, वह पीठ पर क्यों होगी! चाहो, तो अपनी पीठ देख कर ही बताओ।

इधर उधर की बातें न झाड़कर, मैं असली बात बताता हूँ। ठीक तेरह साल पहले, मेरे नाम से बच्चों के लिए एक पत्रिका निकाली गई। इस पत्रिका के कारण, में आप सब के और नज़दीक आ गया। इसलिये इस पत्रिका के चौदहवें जन्मदिवस के विशेषाङ्क में, मैंने भी अपनी राम कहानी सुनानी चाही। अब तो सुना भी दी है। मैं जानता हूँ कि आप में से कई, मेरे पास रोकेट में आने के लिए मचल रहे हैं। जल्दी न करो। वह दिन दूर नहीं है, जय आप मेरे पास आकर जा सकोगे। उस दिन को समीप लाने के लिए कितने ही वैज्ञानिक प्रयत्नशील हैं। तब तक मेरी तरफ से “चन्दामामा " आपको सन्तुष्ट और प्रसन्न करता रहेगा।



मुन्नी की गुड़िया

"माँ, मुझे खेलने के लिए गुड़िया चाहिए।" मुन्नी ने अपनी माँ से कहा।

"इस गाँव में, जब चाहो, तब गुड़िया कहाँ से मिलेगी, बेटी, जब दीवाली पर बहन और जीजा आयेंगे तब तुम्हारे पिता जी से उन्हें लिखवा दूँगी कि वे तुम्हारे लिए गुड़िया लाये।" उसकी माँ ने कहा।

"दीवाली के आने में अभी कितने दिन हैं?" पुत्री ने पूछा।

"दिन? पाँच महीने होंगे।" माँ ने कहा।

"पाँच महीने और तब तक खेलने के लिए खिलौने ही नहीं होंगे!" मुन्नी निराश हो गई। जब तक वह भी श्यामला की तरह बगल में गुड़ा, गुड़िया, रखकर सारा गाँव न घूमेगी तब तक उसको तसल्ली न होगी।



श्यामला सेठ की लड़की थी। जब उसका पिता शहर गया तो वह श्यामला के लिए एक बड़ा गुड़ा लाया। पहले दिन तो उसने उसे किसी को न दिखाया। दूसरे दिन अपनी सहेलियों को बुलाकर दिखाया। कल से वह उस गुड़े को गोद में लेकर सब के घर जा रही थी।



मुन्नी ने कल ही उस गुड़े को देखा, उसको कमीज पेन्ट भी पहना रखा था। पैरों में जुराब और जूते थे। अगर गुड़ा हँसता तो मुख खुलता और दान्त दिखाई देते। गाल ऐसे कि लगता था, जैसे गुलाब की पंखुड़िया चिपका दी गई हो।

मुन्नी उस गुड़े को देख कर बहुत खुश हुई। पर श्यामला ने इस बीच कहा-"तुम अपने मैले हाथों से इसे न छुओ। गुड़ा खराब हो जायेगा।"

परन्तु श्यामला ने मुन्नी को गुड़ा देखने भी न दिया। उसने कहा- "अब मुझे

जाना है। लड़का थक गया है। जाकर सुलाना है।" श्यामला ने कहा।



श्यामला, मुन्नी को न भाती थी। चूँकि उसे गुड़ा प्यारा था, उसने कुछ भी तो नहीं कहा। "श्यामला, क्या मैं इस के लिए लोरियाँ गाऊँ?" भुन्नी ने मनाते हुए उस से पूछा।

"इसके लिए तुम भला क्यों लोरियाँ गाओ, में ही गा लूँगी। अगर तुम गाना ही चाहती हो, तो अपने गुड़े गुड़ियों के लिए गाओ।" श्यामला ने नाक भौं चढ़ाते हुए कहा। मुन्नी को बड़ा गुस्सा आया। श्यामला को गाना बिल्कुल न आता था। कभी गाती भी तो रासभ राग में गाती। मुन्नी बड़ा अच्छा गाती थी। रात को जब चिराग जला दिये जाते तो, मुन्नी और उसकी दादी कितने ही गाने गाते। इसीलिए मुन्नी ने कहा था कि श्यामला के गुड़े को वह लोरियाँ सुनायेगी। उसे कहने की क्या जरूरत थी-"चाहो तो अपने गुड़े के लिए गाओ।" जैसे वह जानती न हो कि मेरे पास गुड़िया है ही नहीं।

पाँच और महीने। तब तक उसे गुड़िया न मिलेगी जब जब वह यह सोचती, तो असके मन में दुख उमड़ आता। रोकने की कोशिश करती तो रोक नहीं पाती।

"क्यों बेटी, अकेली बैठी बैठी क्यों रो रही हो? क्या माँ ने मारा है?" मुन्नी ने दादी की आवाज पहचान ली। परन्तु वह सिर उठाकर कुछ कह न सकी। दादी ने मुनी को पास बुलाया। उसने मुख धोया। गाल सहलाये। चूमा, मुन्नी के रोने का कारण जान लिया। "अरी पगली! बस इतनी-सी बात पर रो रही हो? हम खेलेंगी गुड़े गुड़ियों का खेल।" दादी मुन्नी को पिछवाड़े में ले गई।



दादी को देखकर मुन्नी अपना दुख भूल गई। दादी ने नारियल का एक पत्ता लिया। उससे उसने दो गुड़ियाँ बनाई। एक बड़ी और दूसरी छोटी। दोनों को उसने चीथड़े पहनाये। उनके माथे पर शादी के टीके भी लगाये। एक और पत्ते से शहनाई बनाई। मुन्नी से उसे बजाने के लिए कहा। मुन्नी को यह खेल बिल्कुल पसन्द न आया। फिर भी उसने "शहनाई" बजाई। परन्तु वह बजी नहीं। मुन्नी ने वह "शहनाई" फेंक दी। और नारियल के दुल्हा दुल्हन को दूर फेंक कर जोर से रोने लगी।

ठीक उसी समय मुन्नी के पिता ने कहा-"माँ, मुन्नी को क्यों रुला रही हो?" मुन्नी की माँ ने रसोई में से कहा-"सवेरे से मुन्नी रो रही है; उसे खेलने के लिए गुड़िया चाहिये। सेठ की लड़की के पास गुड़ा क्या देखा कि यह गुड़ा पाने के लिए पागल सी हो रही है।"

"उसका सिर। मैं उसे इतनी देर से खिला रही हूँ। वह तो गुड़े गुड़ियों से खेलना ही नहीं जानती।" दादी ने कहा।

"क्या मैं खेली थी क्या? तुम ही तो उनसे खेल रही थी।" मुन्नी ने कहा।

पहले तो उसके पिता ने उसकी फिक्र न की। पर जब उसने देखा कि मुन्नी किसी से बात न कर रही थी। ठीक तरह





खा भी नहीं रही थी, तो उसने शहर में रहनेवाले दामाद को लिखा कि एक गुड़िया खरीद कर पोस्ट में भेज दे।

एक सप्ताह बाद कहीं जाकर एक गुड़िया आई। तब तक मुन्नी का गुड़े गुड़ियाँ का शौक भी जाता रहा। पर जब उसने लकड़ी की पिटारी में से गुड़िया निकालकर देखी, तो उसका मुँह चमचमा उठा।

"कितनी सुन्दर गुड़िया है। कितनी विचित्र।" पिटारी से जब यह निकाली गई तो उसने " क्यार" ध्वनि भी की।

"यह लिटाने पर अखिं मूँद लेती है। खड़े होने पर क्यार करती है।" उसके पिता ने कहा।

गुड़िया को गले लगाकर मुन्नी ने कहा-"मेरी गुड़िया, मेरी नन्हीं गुड़िया।"

"जरा सम्भलकर खेलना। अगर तुमने उसके हाथ पैर खींच डाले तो यह किसी काम का न रहेगा।" उसकी माँ ने कहा।

"मैं अपनी गुड़िया को भला क्यों खराब करूँगी?" मुन्नी ने कहा। उसने दादी के पास जाकर कहा- "दादी, मेरी गुड़िया देखी देखो, लिटाने पर अखि गेंद लेती है। उठाने पर क्यार करती है।"

"तेरी गुड़िया बिल्कुल अच्छी नहीं है. मेरे खिलौने ही अच्छे हैं।" दादी ने मुँह इधर-उधर घुमाते हुए कहा। मुन्नी को दादी पर गुस्सा आ गया।

मुन्नी अकेली बैठी-बेटी काफ़ी देर तक गुड़िया से खेलती रही। उसे कन्धे पर रखकर थपकियाँ दी। जब थोड़ी देर बाद उठाकर देखा तो गुड़िया की आँखें

खुली ही थीं। फिर उसे गोद में लेकर इधर-उधर घूमी। जब गोदी से कन्धे पर रस्वती, या कन्धे से गोदी में लेती, तो गुड़िया "क्यार" करती।

मुन्नी ने गुड़िया को वे सब गाने सुनाये, जो उसे आते थे। जब उसने उसको पैरों पर लिटाया, तो उसने आँखें मूँद लीं। जब उसे सुलाने के लिए, उसने घुटने ऊपर नीचे किये, तो वह "कुर, कुर" करती।

जल्दी ही मुन्नी सोचने उगी कि वह गुड़िया न थी, बल्कि सचमुच जीती-जागती लड़की थी।

यह याद करके कि श्यामला अपने गुड़े के बारे में कितनी कमीना थी, वह अपनी गुड़िया लेकर सबको दिखाने चली। मुन्नी की गुड़िया देखकर, राधा, जयलक्ष्मी, कल्याणी, लक्ष्मी, शारदा सब बड़ी खुश हुई। "लिटाने पर कैसे आँख बन्द कर लेती है। उठाने पर कैसे रोती है। गाऊन कितना सुन्दर है। बाल देखो, कितने सुन्दर है, रिवन लगाये हुए हैं। श्यामला का गुड़ा बिल्कुल अच्छा नहीं है। सिर पर बाल ही नहीं है। केवल रङ्ग पोत रखा है।" जब सबने यों कहा तो मुन्नी फूली न समाई।

मुन्नी ने अपनी गुड़िया को सबको उठाने दिया। मुन्नी न भूली थी कि जब श्यामला ने उसे गुड़ा न दिया था, तो उसे कितना दुख हुआ था। इसलिए वह बहुत खुश हुई कि उसकी गुड़िया उठाकर और





कितने खुश हुए थे। आखिर मुन्नी का अच्छाई के कारण ही बुरा भी हुआ। मुन्नी के देखते-देखते वह गुड़िया हर किसी की हो गई। वे आपस में उससे छीनने लगीं। जब गुड़िया "क्यार क्यार" करती तो मुन्नी का मन भी रोता।

"मेरी गुड़िया, मुझे दे दो।" मुन्नी चिल्लाई। पर किसी ने उसकी न सुनी। एक लड़की के हाथ में गुड़िया की टाँग आ गई। मुन्नी जोर से चिल्लाई। उसे एक साथ गुस्सा और दुख आया। वह सबसे झगड़ने लगी। उस लड़की ने मुन्नी की गुड़िया की टाँग को दूर फेंक दिया। बाकी गुड़िया को जिसने पकड़ा था, उस लड़की ने कहा-"किसे चाहिए तेरी गुड़िया!" उसने उसे जमीन पर दे मारा। गुड़िया क्या गिरी कि मुन्नी का मन टूक-टूक हो गया। उसकी आँखों से आँसूओं की नदियाँ बहने लगी।

"गुड़िया की आँखें फूट गई हैं।" किसी का चिल्लाना सुनाई दिया। मुन्नी का दिल, सहसा, मानों रुक गया। उसे लगा, जैसे सबने मिलकर उसकी गुड़िया का कत्ल कर दिया हो। वह जोर-जोर से रोने लगी और इस बीच, सब लड़कियाँ रफू चक्कर हो गयीं।

मुन्नी दस पन्द्रह मिनट रोती रही। जब आँखें पोंछकर खड़ी हुई तो देखा कि गुड़िया पास ही थी। सचमुच उसकी आँखें न थीं। एक पैर भी न था। पैर दूर घास पर पड़ा था। उसे देख मुन्नी फिर रोने लगी।

"छी, छी, क्या बच्चे यों रोया करते हैं।" मुन्नी ने पीछे मुड़कर देखा तो हस्पताल में दवा देनेवाले डाक्टर दिखाई दिये।



"तुम्हारा नाम क्या है? क्यों रो रही हो?"

हिचकियों के कारण मुन्नी बात न कर सकी। उसने सब कुछ बताना चाहा, पर बता न पायी। फिर वह गुड़िया दिखाकर घुट-घुटकर रोने लगी।

"हाँ, तो यह बात है।" डाक्टर ने गुड़िया उठाकर उसे इधर उधर घुमाकर देखा। फिर उसने कहा- "इसकी एक टाँग टूट गई है।" मुन्नी ने रोते हुए घास में पड़ी टाँग को दिखाया।

डाक्टर साहब ने उस पैर को भी उठाकर देखा। फिर उसने मुन्नी से कहा-"तुम्हें रोने की ज़रूरत नहीं है। तेरी गुड़िया को बस बीमारी हो गई है। आपरेशन करके इसको ठीक किया जा सकता है। ऐसे काम करने के लिए हस्पताल जो है। आओ चलें।"

मुन्नी ने रोना बन्द कर दिया। आँखें पोंछते हुए कहा-"ओपरेशन करने से क्या गुड़िया ठीक हो जायेगी, डाक्टर जी!"



"करके देखेंगे।" डाक्टर ने कहा।

अस्पताल पहुँचते-पहुँचते मुन्नी ने बताया कि उसी दिन जीजा ने उसको वह गुड़िया भेजी थी और बच्चों ने मिलकर उस गुड़िया की तोड़ मरोड़ दिया था।



"देखा! तो यह गुड़िया यानि तेरी लड़की है। जितनी अच्छी तरह तू अपनी लड़की को देखेगी, क्या और देखेंगे?" डाक्टर ने कहा।

दोनों हस्पताल में गये। डाक्टर ने गुड़िया को मेज़ पर लिटाया। छोटा सा ओपरेशन करें। पैर का ओपरेशन करें।"

मुन्नी, गुड़िया की टाँग जब टूटी थी तो रो पड़ी थी। पर उसको जोड़ने में एक क्षण भी न लगा। रबर के धागे से उसने टाँग जोड़ दी। टाँग ठीक करके, डाक्टर ने गुड़िया को घुमा फिराकर देखा। "देखा?

टॉग ठीक हो गई है।" मुन्नी का मुँह एक क्षण खिला-सा, फिर सिकुड़-सा गया।

फिर पूछा-"मगर आँखें?"

"यह जरा बड़ा ओपरेशन है। अगर तुम देखोगी तो डर जाओगी। थोड़ी देर दूर जाओ।"

जैसे सब कुछ समझ गई हो, वह गम्भीरतापूर्वक खड़ी होकर बाहर चली गई। उसे बड़ा भय हुआ कि गुड़िया का बड़ा ओपरेशन हो रहा था।

डाक्टर ने गुड़िया उठाई और सिर से बाल हटाये । चाकू से सिर काटा और अन्दर नीचे गिरे आँखों को ठीक स्थान पर रख दिया। फिर सिर ठीक कर दिया। बाल भी लगा दिये। जब मुन्नी को अन्दर बुलाया तो उसने देखा कि गुड़िया की आँखें ऊपर नीचे हो रही थीं।

डाक्टर की पुकार सुनकर मुन्नी अन्दर गई। गुड़िया को देखकर वह खुशी में चिल्लाई। गुड़िया को लिटाया, उठाया, जब उसने "क्यार" किया, तो उसे गले लगा लिया। उसको चूमा।

"अगर कभी गुड़िया बीमार हो तो मेरे पास ले आना।" डाक्टर ने कहा।

"जरूर लाऊँगी। पर इस ओपरेशन के लिए कितना देना होगा।" मुन्नी ने गम्भीर होकर पूछा।

"कुछ नहीं; दो चुम्बन।" डाक्टर ने मुन्नी को उठाकर उसके दोनों गालों को चूमा।





कहते हैं किसी देश में कोई राजकुमार रहा करता था। वह धनी तो था ही, बड़ा दानी मी था। हर रोज सवेरे उसके महल के सामने हज़ारों भिखारी उसका दान पाने जमा होते। नगर के प्रतिष्ठित लोग उसके घर दावत खाने जाते और उसकी प्रशंसा किया करते।

राजकुमार का विवाह नहीं हुआ था। वह सारी प्रजा को अपना कुटुम्ब समझता। हर रोज़ भिखारी उससे भिक्षा पाकर कहते- "महाराज, हज़ार बरस जियें। अगर आप समुद्र में कूदने के लिए भी कहें तो हम कूदेंगे।" दुपहर को प्रतिष्ठित लोग उसके घर खाना खाकर कहते-"महाराज, आप ही हमारे माँ-बाप हैं। अगर आप हमें आग में भी कूदने के लिए कहें तो हम कूदेंगे।" यह सब सुनकर राजकुमार फूला न समाता।

एक दिन एक युवक ने राजकुमार के पास आकर कहा-"महाराज! यह जानकर कि आप बड़े दानी हैं, मैं आपसे बहुत-सी सहायता माँगने आया हूँ। मैं अभागा हूँ। छुटपन में ही मेरे माँ-बाप गुजर गये। दुनियाँ भर की मुसीबतें झेलकर मैंने हाल में ही शादी की थी कि पिछले दिनों पत्नी भी मर गई। अगर आपने दस मुहरें दीं, तो उसकी अन्त्येष्टि क्रिया कर लूँगा। यह काम करके बिना किसी वेतन के आपकी सेवा करूँगा।"

"दस मुहरें क्या सौं मुहरें दूँगा। तुम पत्नी की अन्त्येष्टिक्रिया करो। गरीबों को भोजन दो। तुम्हें मैं अपना नौकर रख लूँगा। वेतन भी दूँगा।" राजकुमार ने कहा।

युवक दो दिन बाद राजकुमार के पास आकर नौकरी पर लग गया। वेतन माँगने



के लिए जब कहा गया तो उसने कहा-"महाराज, आपके घर में भला मुझे क्या कमी रहेगी? अगर कभी पैसे की जरूरत हुई तो मैं ही माँग लूँगा।"

राजकुमार ने उससे ज्यादह कुछ न कहा। सारे घर का भार उसे सौंप दिया।

कुछ दिन बीत गये। एक दिन नौकर ने राजकुमार के पास आकर कहा-"महाराज, आप धन पानी की तरह खर्च कर रहे हैं। भिखारियों को दिया जानेवाला दान, बड़े लोगों को दी जानेवाली दावतें जरा कम कर दी जायें तो अच्छा होगा। अगर खर्च इसी तरह जारी रहा, तो पहाड़ भी पिघल जायेंगे। फिर आपका गुजारा कैसे होगा?"

राजकुमार ने हँसकर कहा-"हमारे पास कमी किस चीज़ की है? बाल-बच्चे हैं नहीं। मेरा सब कुछ खतम हो गया तो मेरे राज्य का एक एक आदमी मुझे अपनायेगा। रोज़ भिखारी कहा करते हैं कि अगर मेरे लिए समुद्र में भी कूदना पड़ा तो वे कूदेंगे। क्या तुमने बड़े लोगों को कहते नहीं सुना कि ज़रूरत हुई तो ये मेरे लिए आग में भी कूदेंगे। वे सब मेरे साथ जब हैं, तो मुझे क्या कमी है?"

"उनकी बातों पर विश्वास नहीं किया जा सकता।" नौकर ने कहा।

उस दिन जब दावत हो रही थी, तो राजकुमार ने अपने अतिथियों से कहा-"मित्रो, आप रोज कहते हैं कि ज़रूरत पड़ने पर आप मेरे लिए आग में भी कूदने से नहीं हिचकेंगे। परन्तु मेरा नौकर कह रहा है कि आपकी बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता। आप क्या कहते हैं?"

अतिथियों को गुस्सा आया। उन्होंने कहा-"आप का नौकर चोर है। वह



आपको दिन दहाड़े लूट रहा है। उसका विश्वास नहीं किया जा सकता।"

राजकुमार ने अपने सेवक को बुलाकर डाँटा फटकारा। "सुनता हूँ कि तुम मेरी धन दौलत चुरा रहे हो।"

"महाप्रभु जी यह ठीक है। मैंने आपका बहुत सा धन चुराया है।" नौकर ने कहा।

"छी, अपनी शक्ल फिर कभी न दिखाना। तुरन्त मेरा घर छोड़कर चले जाओ।" राजकुमार ने अपने नौकर से कहा।

नौकर नगर से बाहर गया। नदी पार की। और नदी पार के अपने महल में चला गया। राजकुमार के यहाँ से चुराये हुए सोने से ही उसने यह महल कुछ दिनों पहले खरीदा था।

इसके बाद एक साल तक राजकुमार भिखारियों को दान देता रहा, प्रतिष्ठित लोगों को दावत खिलाता रहा। फिर उसका खजाना खाली हो गया। उसमें कानी-कोड़ी भी न रही। उसने सोचा कि उसके बाद उसकी प्रजा ही उसका भरण-पोषण करेगी। उसने प्रतिष्ठित लोगों को आखिरी दावत देते हुए कहा- "मित्रो! यह मेरी अन्तिम दावत है। अब मेरे पास कानी कौड़ी भी नहीं है। अब तक आप कहते आये थे कि आप मेरे लिए आग में भी कूदेंगे, इसलिए मेरे भरण-पोषण का भार कल से आप लेंगे, ऐसी में आशा करता हूँ।"

अतिथियों ने मुँह सिकोड़ते हुए एक दूसरे को देखा और कहा- "महाराज, आपने सारा धन दान-धर्म में लुटा दिया। इस समय वे भिखारी ही सहायता कर सकते हैं, हम नहीं।" उसके बाद उन्होंने राजकुमार की ओर देखा तक नहीं। वे आपस में बातें

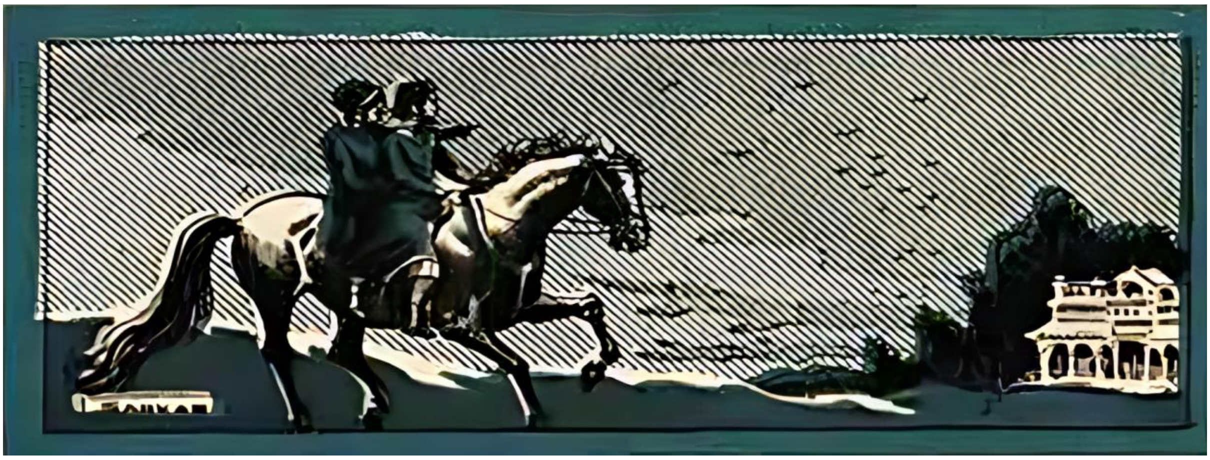
करने लगे। राजकुमार को पहले पहले अपने ही कानों पर ही विश्वास नहीं हुआ। उसने सोचा कि उन प्रतिष्ठित लोगों ने उसे खूब ठगा था।

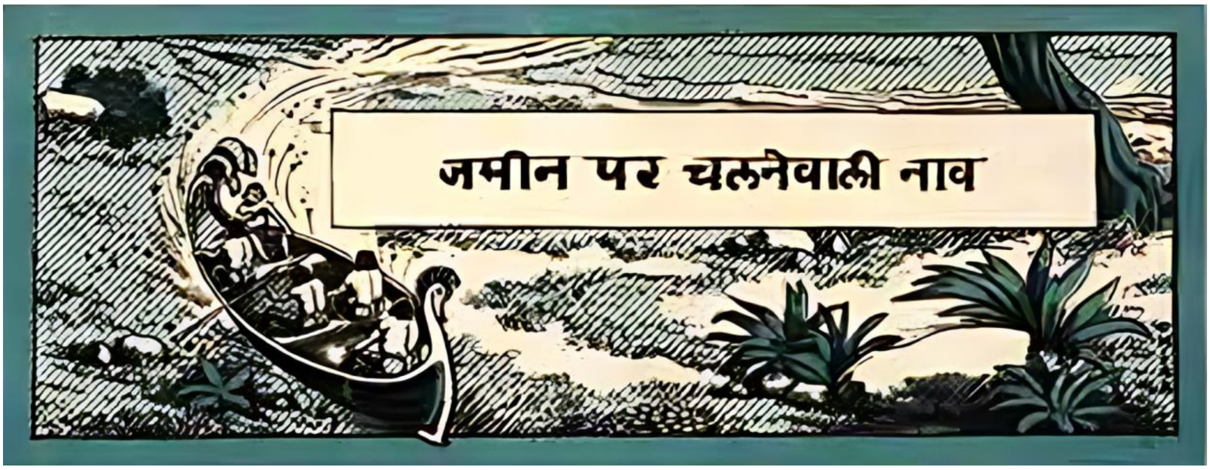
फिर उसने दान के लिए आनेवाले भिखारियों से कहा-"तुम सबको मैं इतने दिनों से दान देता आ रहा हूँ। तुम रोज कहते आये हो कि तुम मेरे लिये समुद्र में भी कूदोगे। अब मेरे पास का सारा धन समाप्त हो गया है। इसलिए मैं अब तुम्हारा पालन नहीं कर सकता। तुम्हें ही मेरा पालन करना होगा।"

"महाराज, आप जब तक बड़े-बड़े लोगों को बुलाकर बड़ी-बड़ी दावतें देते रहेंगे, तो पैसा खत्म होगा ही। आपका पालन पोषण तो उनको करना चाहिए। अगर वे यह नहीं कर सकते, तो आप भी हमारे साथ भीख माँगिये। इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है।" भिखारियों ने कहा।

राजकुमार सब तरह से हताश हो गया था। न अपनों ने ही अपनाया, न परायों ने ही सहलाया। वह चिन्तित था कि किसी व्यक्ति के घोड़े पर सवार होकर आने की आहट सुनाई दी। थोड़ी देर में पुराना नौकर आया।

"महाराज, वही न हुआ जो मैंने कहा था। यह होगा, यह जानकर ही मैंने आपका बहुत-सा धन लेकर नदी पार महल में सुरक्षित रखा था। इन लोगों को, इस महल को छोड़ छाड़कर वहाँ सुख से जीवन काटिये।" पुराना नौकर राजकुमार को उस महल में ले गया। उसके बाद दोनों ने अपने अनुकूल कन्याओं से विवाह किया और दो भाइयों की तरह आराम से जीने लगे।





बहुत पहले की बात है। कहीं कोई राजा हुआ करता था। उस राजा के पास बहुत-सी विचित्र चीज़ें थीं। उसकी एक लड़की भी थी। उस देश में उससे अधिक कोई सुन्दर कन्या न थी। सब कुछ था, पर उसको एक कमी हमेशा सताती। वह यह कि जाने कब से वह एक ऐसी नाव की कल्पना करता आया था, जो जमीन पर चल सके। उसने कई से जमीन और जल पर चलनेवाली नाव बनाने के लिए कहा। परन्तु किसी ने उसको ऐसी नाव बनाकर न दी।

आखिर राजा उब-सा गया। "जो कोई ऐसी नाव बना सकेगा, जो भूमि पर चल सके और जल पर भी, मैं उसके साथ अपनी लड़की की तो शादी करूँगा ही; उसको अपना आधा राज्य भी दूँगा।" उसने यह घोषणा देश भर में निकलवा दी।

उस राज्य के पास ही जङ्गल के नजदीक एक लकड़हारा रहता करता था। उसके तीन लड़के थे। बड़े लड़के ने राजकुमारी से शादी करनी चाही। एक दिन सवेरे कन्धे पर कुल्हाड़ी रख हाथ में रोटी की पोहली ले वह जङ्गल गया।

एक बड़ा-सा पेड़ देखकर उसने दुपहर तक उसे काट डाला। फिर उसने रोटी खाने की कोशिश की। पर इतने में पेड़ पर से एक गौरैया ने गला खोलकर कहा-"थोड़ा मुझे दो, थोड़ा मुझे दो।"

"जा वे जा, इसमें तुम भी हिस्सा चाहती हो?" बड़े लड़के ने पूछा।

पक्षी ने पास आकर पूछा-"खैर, इस तने का क्या करोगे?"

"चाहे कुछ भी करूँ, तुम्हे क्या? पलङ्ग के पाये बना दूँगा? ठीक है न!" बड़े लड़के ने कहा।

"पलङ्ग का पाया! पलङ्ग का पाया!" चिल्लाती-चिल्लाती गौरय्या भाग गई। खाना खाकर, आराम करके कुल्हाड़ा लेकर, उसने पेड़ के तने को गढ़ना शुरु किया। तने पर कुल्हाड़ी की चोट जो लगती तो स्वयं पलङ्ग का पाया कट जाता। उसमें उसका अपना कोई प्रयत्न न था। शाम तक तने में से कितने ही पाये निकल आये। उसने कुल्हाड़ी वहीं फेंक दी, चिढ़ा चिढ़ा घर वापस चला गया।

"वह नाव, जो जमीन पर चलेगी, कितनी बन गई है?" उसके भाइयों ने उससे पूछा। उसने इसका उत्तर न दिया, बल्कि पूछा-"राजा की लड़की से कौन विवाह करेगा?"

अगले दिन अपनी कुल्हाड़ी लेकर दूसरा लड़का जङ्गल गया। उसने भी एक बड़ा पेड़ गिराया। जब वह खाना खाने बैठा, तो गौरय्या आकर चिल्लाई-"मुझे थोड़ा दो, थोड़ा-सा मुझे भी।"

"जा बे जा। तुम इसमें भी हिस्सा चाहती हो?" दूसरे लड़के ने कहा।



पक्षी ने उसके पास जाकर पूछा- "खैर, यह तो बताओ, इस तने का क्या करोगे?"

"चाहे जो बनाऊँ तुझे क्या? मथनियाँ बनाऊँगा, ठीक है न!"

"मथनियाँ! मथनियाँ!! मथनियाँ!!!" चिड़चिड़ाती चिड़चिड़ाती गौरैया उड़ गई।

फिर जब दूसरे लड़के ने कुल्हाड़ी से तने पर चोट की, तो उसमें से एक मथनी गिरी। उसने बहुत कोशिश की, पर सिवाय मथनियों के वह और कुछ न बना सका। शाम होते-होते तना खत्म हो गया और ढेर-सी मथनियाँ बन गई। वह अपनी कुल्हाड़ी फेंककर घर चला गया।

"जमीन पर चलनेवाली नाव कितनी बन गई है?" बाकी दोनों भाइयों ने पूछा। दूसरे भाई ने बड़े भाई की तरह पूछा-"राजकुमारी किसको चाहिए।"

अगले दिन तीसरा भाई भी जमीन पर चलनेवाली नाव बनाने के लिए निकला। वह भी कुल्हाड़ी कन्धे पर डाल, रोटी की पोटली ले जङ्गल गया। दुपहर तक उसने भी एक बड़ा-सा पेड़ काटकर गिरा दिया। फिर वह भोजन करने के लिए बैठा। इतने में





गौरय्ये ने आकर कहा-"थोड़ा मुझे भी थोड़ा दो।"

तीसरा भाई उसे देखकर बड़ा खुश हुआ। उसने खाने की चीजें चारों ओर फैला दी। पक्षी ने उन सबको चुन चुनकर चुग लिया। "खैर, इस तने का क्या करोगे?"

"मैं एक ऐसी नाव बनाना चाहता हूँ, जो जमीन पर चल सके। परन्तु मैं नहीं जानता कि वह होती कैसी है।" तीसरे भाई ने कहा।

"जमीन पर चलनेवाली नाव, जमीन पर चलनेवाली नाव, जमीन पर चलनेवाली नाव" कहती कहती गौरय्या उड़ गई।

तीसरे लड़के ने भोजन करके विश्राम किया। फिर कुल्हाड़ी से तना काटने लगा। कुल्हाड़ी लगते ही नाव का एक भाग कटकर अलग हो गया। इस तरह शाम होते होते एक नाव तैयार हो गई। उसे देख तीसरे लड़के ने पूछा-"क्या यह सचमुच चलेगी!" सोचता, सोचता वह उसमें जा बैठा, चप्पू लेकर उसे चलाने लगा। "चलो नाव" उसने कहा। तुरन्त नाव पेड़ों के बीच में चलने लगी। नाव थोड़ी दूर गई थी कि रास्ते में उसे एक आदमी दिखाई दिया, जो हड्डियों के ढेर के सामने बैठा था। वह हड्डियों को दान्तों से काट रहा था। तीसरे भाई ने उससे पूछा-"क्यों खाली हड्डियों को यों काट रहे हो?"

"क्या करूँ? चाहे जितना खाऊँ पर मेरी भूख नहीं मिट रही है। जो कुछ पैसा था वह खाने पीने में खर्च दिया।" उस आदमी ने कहा।

"मैं राजमहल जा रहा हूँ। वहाँ तेरी भूख जरूर मिटेगी। मेरे साथ आओ।" तीसरे लड़के ने कहा। वह नाव में बैठ गया। नाव आगे बढ़ी।

थोड़ी दूर और जाने के बाद एक आदमी नाले में मुख रखकर पानी पी रहा था। नाले में पानी कुछ कम हो रहा था।

"तुम कौन हो? क्यों वो पानी पी रहे हो?" तीसरे भाई ने पूछा।

"क्या करूँ? मेरी प्यास बुझती ही नहीं। जब तक पी सका, पीपों के पीपे शराब पी गया। अब पानी पी रहा हूँ। परन्तु पानी से मेरी प्यास नहीं बुझती।" उस प्यासे ने कहा। तीसरे भाई ने उसको भी साथ लिया। नाव आगे बढ़ी। एक जगह उनको एक नवयुवक दिखाई दिया। वह आधा जङ्गल कन्धे पर रखकर चला आ रहा था। तीसरे भाई ने उससे पूछा-"इतने पेड़ कहाँ ले जा रहे हो?"

"मेरी सौतेली माँ, चाहे मैं कितनी भी लकड़ियाँ ले जाऊँ, हमेशा कहती है, बस इतनी ही! मुझे गुस्सा आ गया। अब आधा जङ्गल काटकर ले जा रहा हूँ।" नवयुवक ने कहा।

"क्यों वो मेहनत करते हो! मेरे साथ चले आओ। मैं राजा का अतिथि होकर जा रहा हूँ। वहाँ हमारा अच्छी तरह गुजारा होगा।" तीसरे भाई ने कहा।



जङ्गल ढोनेवाला भी नाव में बैठ गया। उसने एक बड़ा पेड़ लाठी के तौर पर हाथ में रख लिया और बाकी पेड़ फेंक दिये। नाव आगे बढ़ी। कुछ दूर जाने के बाद, उनको एक और विचित्र व्यक्ति दिखाई दिया। वह सिर ऊपर करके आकाश में फूँक-सा रहा था।

"क्यों ऐसा कर रहे हो?" तीसरे भाई ने पूछा।

"क्या करूँ! अभी तक हमारे मालिक के खेतों में धान पड़ा है। मैं उनको भगा रहा हूँ। मेघ आ रहे हैं। चाहे मैं कितनी भी कोशिश करूँ, मालिक एक दाना भी अधिक न देगा।" किसान ने कहा।

"तो तुम ऐसी नौकरी क्यों करते हो? तुम मेरे साथ राजा के घर चले आओ। वहाँ आराम से नौकरी करेंगे।" तीसरे भाई ने कहा। मेघों को फूँकनेवाला भी नाव में बैठ गया।

लकड़हारे के तीसरे लड़के ने भूखे, प्यासे, जङ्गल ढोनेवाले, मेघों को फूँकनेवाले साथ लेकर राजा के पास जाकर कहा-"मैं ऐसी नाव ले आया हूँ, जो जमीन पर चल सकती है। देखिये।"



राजा को आश्चर्य हुआ। वह भी नाव में जा बैठा। उसने उसे पानी में, पृथ्वी पर चलाकर देखा। "अच्छी है। मैं ऐसी नाव ही चाहता था। तुम्हें ठीक इनाम दिलाऊँगा।"

"आपने तो कहा था कि अपनी लड़की दोगे और आधा राज्य भी। वही कीजिये।" लकड़हारे के लड़के ने कहा।

राजा को यह हरगिज पसन्द न था। वह अपनी लड़की को किसी राजकुमार को न देकर, इस लकड़हारे को कैसे दे? इसलिए उसने तीसरे लड़के से कहा-"हाँ, यह ठीक तो है कि हमने कहा था कि लड़की का विवाह करेंगे, पर वह बात अभी होनेवाली नहीं है। गोदामों में सव पुराना खाने का माल पड़ा है, वह जबतक खत्म न हो जायेगा, और नया माल न आयेगा, तब तक विवाह का मुहूर्त निश्चित नहीं किया जा सकता।"

"वह सब चुटकी मारते ही खत्म हो जायेगा, वह काम मुझे सौंपिये।" तीसरे लड़के ने राजा से कहा और उसने भूखे को राजा के गोदामों में भेजा। उसने एक क्षण में गोदाम खाली कर दिये।



"अब नये खाद्य पदार्थ मँगाकर विवाह का मुहूर्त निश्चित कीजिये।" तीसरे लड़के ने राजा से कहा।

"क्या यही काफी है कि खाने की चीज़ें खत्म हो गईं! पीपों में शराब भरी पड़ी है। लगता है वह थोड़ी बिगड़ने भी लगी है। वह सब जब खत्म हो जायेगी और नई शराब पीपों में भर दी जायेगी, तब विवाह का मुहूर्त निश्चित होगा।"

"यह भी कोई काम है!" कह कर तीसरे लड़के ने प्यासे को शराब की कोठरियों में भेजा। उसने थोड़ी देर में सारे पीप खाली कर दिये। "आज तो मुझे ऐसा लग रहा है, जैसे कोई त्यौहार हो।" उसने कहा।

राजा को लकड़हारे के लड़के पर गुस्सा आया। उसने अपनी फौज को बुलाकर कहा-"इस लकड़हारे को और उसके दोस्तों को भगा दो।"

फौज को अपने पास आते देख, तीसरे लड़के ने जङ्गल ढोनेवाले से कहा-"जरा इनकी खबर तो लो।" जङ्गल ढोनेवाले ने अपने हाथ की लाठी से राजा की फौज को धुन कर रख दिया।

राजा को और गुस्सा आया। उसने अपने घुड़सवारों को भेजा। जब घोड़ों को फूँकनेवाले ने साँस छोड़ी तो घोड़े, घुड़सवार, फौज सूखे पत्तों की तरह उड़ने लगी। राजा ने सोचा अगर वह यूँ ही कुछ देर तक फूँकता रहा तो राजमहल और मुझे भी कहीं न फूँक दे। वह डर गया। उसने अपनी लड़की की शादी, लकड़हारे के लड़के से कर दी, और उसको आधा राज्य भी दे दिया।

तीसरे लड़के ने अपने साथियों को मन्त्री बनाकर बहुत समय तक सुखपूर्वक राज्य किया।





[३]

"पहाड़ी डाकू" का किला समुद्र प्रान्त में था। उसको पार करने के लिए छः रोज़ लगे। इसके बाद बड़े बड़े रेगिस्तान आये। उनमें कई पचास साठ मील चौड़े भी थे। कहीं भी एक बूँद पानी नहीं मिलता।

उस रास्ते में बाल्ख नाम का एक नगर आता है। कभी यह बहुत बड़ा शहर था। परन्तु तातार और और जातियों ने इसको लूट कर नष्ट कर दिया। कितने ही सङ्गमरमर के महलों के खण्डहर अब भी वहाँ थे। कहा जाता है कि इसी नगर में सिकन्दर ने फारस के राजा डेरियस की लड़की से विवाह किया था। अगर यहाँ से जनशुन्य मार्ग पर ईशान्य की ओर चला जाये तो तालीखान नामक नगर आता है। इस नगर के दक्षिण में जो पहाड़ हैं, उसमें नमक की खानें हैं। इनमें इतना नमक है कि सारे संसार के खर्च के लिए काफी हो सकता है।

सिकन्दर की और डेरियस की लड़की से जो सन्तान हुई और वह जिस देश पर शासन करती थी, उसका नाम वदख़्शान था। यहाँ एक पहाड़ में केम्प मिलते हैं। एक और पहाड़ में नील मणियाँ मिलती हैं। यह भी समुद्र प्रान्त है। ठण्ड अधिक



पड़ती है। क्योंकि पहाड़ी रास्ते बहुत सङ्करे दुर्गम हैं इसलिए शत्रुओं का भय नहीं है। पहाड़ों पर हवा इतनी साफ़ है कि उस हवा से ही कई बीमारियाँ ठीक हो जाती हैं। यहाँ दो तीन पहाड़ों में गन्धक है। इसलिए वहाँ के पानी से रोगों का निवारण होता है। मार्कोपोलो ने स्वयं इसका अनुभव भी किया।

यहाँ से पामीर के पाठार तक जाने के लिए अट्ठारह दिन का सफर है। बताया जाता है कि पामीर संसार का सब से ऊँचा पठार है। यह पठार प्राणिरहित है। उसको पार करने के लिए बारह रोज लगते हैं। यहाँ के पहाड़ों और नदी नालों को पारकर चालीस दिन यात्रा करने के बाद बेलोर नाम का देश आता है। यहाँ से और आगे जाने पर काष्टर, समरकन्द, यार्कन्द देश आते हैं।

खोटान नगर, खोटान देश की राजधानी है। यह बड़े खान के साम्राज्य में है। इस देश में बहुत से नगर हैं। कपास खूब पैदा होता है। अंगूरों और फलों के बाग बहुत-से हैं। काष्टर से, येम तक का देश तुर्किस्तान कहलाया जाता है।

काष्टर के बाद रेतीली भूमि आती है। परन्तु असली रेगिस्तान लोम नगर के बाद ही शुरु होता है। यात्री यहाँ विश्राम करते हैं और महीने भर की रसद अपने लिए और अपने जन्तुओं के लिए लेकर आगे का सफर शुरु करते हैं। जहाँ रेगिस्तान कम चौड़ा है, वहाँ ही पार करने के लिए महीना लगता है और जगह इसे पार करने के लिए पूरा एक साल लगता है। इस रेगिस्तान को पार करना बड़ा खतरनाक है। अगर कोई यात्री पीछे रह गया या नींद से उठ न सका, तो उसकी मृत्यु अपरिहार्य

है। उसे कहीं से कोई आवाज सुनाई पड़ती है। ऐसा मालूम होता है, जैसे कोई पुकार रहा हो। उसे कभी-कभी आते जाते यात्री भी दिखाई देते हैं। इन सब भ्रान्तियों को न जानकर यात्री रास्ता भटक जाता है। इस तरह जान खो बैठनेवाले बहुत से यात्री हैं। इसलिए रेगिस्तान पार करनेवाले यात्री, भूलकर भी एक दूसरे का साथ नहीं छोड़ते।

इस रेगिस्तान के बाद काबुल देश आता है। उसके बाद फिर एक छोटा रेगिस्तान है। इन रेगिस्तानों के बाद टान्गुट नामक देश आता है। उसमें सूचौ, कानचौ आदि बड़े नगर हैं। इसके बाद कारकोरम नगर है, जिसकी लम्बाई तीन मील है। तातारों ने अपना नगर छोड़कर, यहीं अपना निवास स्थल निश्चित किया। ये तातार पिछले मन्चूरिया के चोर्चा प्रान्त को बैकल झील के पास के इलाके में रहा करते थे। यहाँ बड़े-बड़े मैदान थे। जल की सुमीतायें भी थीं। पर बहुत लोग न थे। न उनका कोई सरदार ही था। परन्तु वे उनगा खान के नीचे रह करते थे। उसका नाम प्रेस्टर जोन भी था।



जब तातारों की संख्या बढ़ने लगी, तो प्रेस्टर जोन ने उनको कई गिरोहों में विभक्त करके भिन्न-भिन्न प्रान्तों में भेजने की ठानी। यह पता लगते ही तातार चुपचाप एक रेगिस्तान में चले गये और उन्होंने उसको कर देना भी बन्द कर दिया। कुछ दिनों बाद इन्हीं तातारों ने चेन्गोझ खान को अपना सरदार चुना। तब संसार में जगह-जगह फैले हुए तातारों ने चेन्गोझ खान को अपना राजा माना। उनकी संख्या बहुत बड़ी थी। जब उसे मालूम हुआ कि इतने आदमी उसके साथ थे, तो उसने उन सबको घनुष-बाण दिये और दिग्विजय के लिए निकल पड़ा। क्योंकि वह न्यायशील

परिपालक था, इसलिए जो हारता, वह भी उसका समर्थक बन जाता। समुद्र-सी विशाल सेना लेकर, उसने संसार को जीतने की ठानी। उसने खबर भेजी कि वह प्रेस्टर जान की लड़की से शादी करेगा। प्रेस्टर जान को गुस्सा आया। उसने कहा-"यह मेरा गुलाम है, इसका काम तमाम करके रहूँगा।" जब चेंगोज़खान को यह मालूम हुआ तो वह बहुत-सी सेना लेकर प्रेस्टर ज़ोन से युद्ध करने के लिए आया।

चेंगोज़खान को आता देख प्रेस्टर ज़ोन डरा नहीं। उसने भी अपनी सेना को सज्जित किया। उसकी भी बड़ी सेना थी। चेंगोज़खान ने अपनी सेना टेन्डुक मैदान में रखी। जब उसने ज्योतिषियों से परामर्श किया तो उसे बताया गया कि विजय उसी की थी। दो दिन बाद प्रेस्टर ज़ोन की सेना उस मैदान में आई। दोनों सेनाओं में युद्ध हुआ। दोनों तरफ के बहुत-से लोग मारे गये। परन्तु विजय चेंगोज़खान की हुई। प्रेस्टर ज़ोन युद्ध-भूमि में मारा गया। फिर कहा जाता है, चेंगोज़खान ने उसकी लड़की से विवाह कर लिया। इस युद्ध के बाद उसने छः साल तक राज्य किया और बहुत से राज्य और देश जीते। फिर जब वह होचो नगर पर आक्रमण कर रहा था, तो घुटने में बाण चुस गया। उसके कारण ही वह मर गया। चेंगोज़ खान के बाद कुयुक खान, बाटुलान आदि बड़े खान के पद पर आये। मार्कोपोलो के समय बड़ा खान कुबलाय खान था। उसका साम्राज्य और बड़े खानों से कहीं बड़ा था।

(अभी है)



गलीयर की यात्रायें



उस महायन्त्र के पास खड़ा होना ही मुश्किल हो गया। पर्वत जितने बड़े शरीरवाले के कोट के जेब में और भी चीजें थीं।



वे थी- एक चाकू। रथ के चकों जितनी सोने की मुहरे। काले गोले... (वे मेरी पिस्तोल की गोलियाँ थीं।)



सम्राट यह रिपोर्ट पढ़ते ही आया। उसने लोहे की बनी लम्बे यन्त्र को दिखाने के लिए कहा।



उसका मतलब मेरी पिस्तौल से था। मैंने हवा में पिस्तौल छोड़ी। उसकी आवाज़ सुन सम्राट और उसके दरबारी भाग गये।



फिर सम्राट की अज्ञा पर मेरी घड़ी, चाकू, पिस्तौल, एक गाड़ी पर लादकर वे ले गये। मुझे कुछ न जान पड़ा कि बात क्या थी।



सौभाग्य से मेरी ऐनक उनकी नज़र में नहीं पड़ी। वह मेरे पास हो रही मैंने उसको छुपाकर रख लिया।





तब एक राजप्रतिनिधि आया। उसने कहा कि जञ्जीरे खोलने के लिए राजा ने आज्ञा दे दी थी। मगर उसके लिए ये शर्तें भी थीं।

मैं खुश था कि जञ्जीरे खोली जा रही थीं। पर किसी राज्य को हानि पहुँचाना मुझे बिल्कुल पसन्द न था।





पर उतने बड़े सम्राट की अवज्ञा करनेवाला मैं कौन होता हूँ? पसन्द और नापसन्द की बात ही नहीं उठती। मैंने शपथ की।

मेरी बाँह जितने बड़े बड़े बृक्षों को पार करता मैं तुरत ब्लेफुस्कू की राजधानी, मिल्टेन्डो देखने निकला।



मेरे आने के बारे में दो घण्टे पहले नगर में घोषणा कर दी गई थी। गलियाँ साफ़ खाली थीं। लोग खिड़कियों में से, दरवाज़ों में से देख रहे थे। पाँच फीट के राजपथ पर मैंने सम्भलकर पैर रखे। राजमहल की ओर चला।



नगर के बीच में सुन्दर राजमहल था। वहाँ सुन्दर उद्यान थे। पाँच फीट ऊँचे सङ्गमरमर के महल बड़े प्यारे-से लगे। किले में चालीस वर्ग फीट खाली जगह थी।



दो फीट ऊँची किली को दीवार में आसानी से पार कर गया। यह डरते डरते कि कहीं कोई दीवार टूट-टाट न जाये।



उस खाली जगह से मैंने हिचकते हिचकते राजमहल के खिड़की और दरवाजों में अन्दर झाँककर देखा।



राजमहल के अन्तःपुर में रेशमी परदे लटक रहे थे। कितने ही सिंहासन थे। सब चमचमा रहे थे। साम्राज्ञी, सम्राट और दरबारी दरबार में बैठे थे।



मन्त्री ने खिड़की के पास आकर कहा कि लिलीपुट के शत्रु ब्लेफुस्कू राज्यवाले आक्रमण करनेवाले हैं। तुम मुकाबला करो।



समुद्र तट पर जाते जाते दूरी पर ब्लेफुस्कू राज्य का तट दिखाई दिया। उनके जहाज और मस्तूल तिनकों की तरह मालूम होते थे।

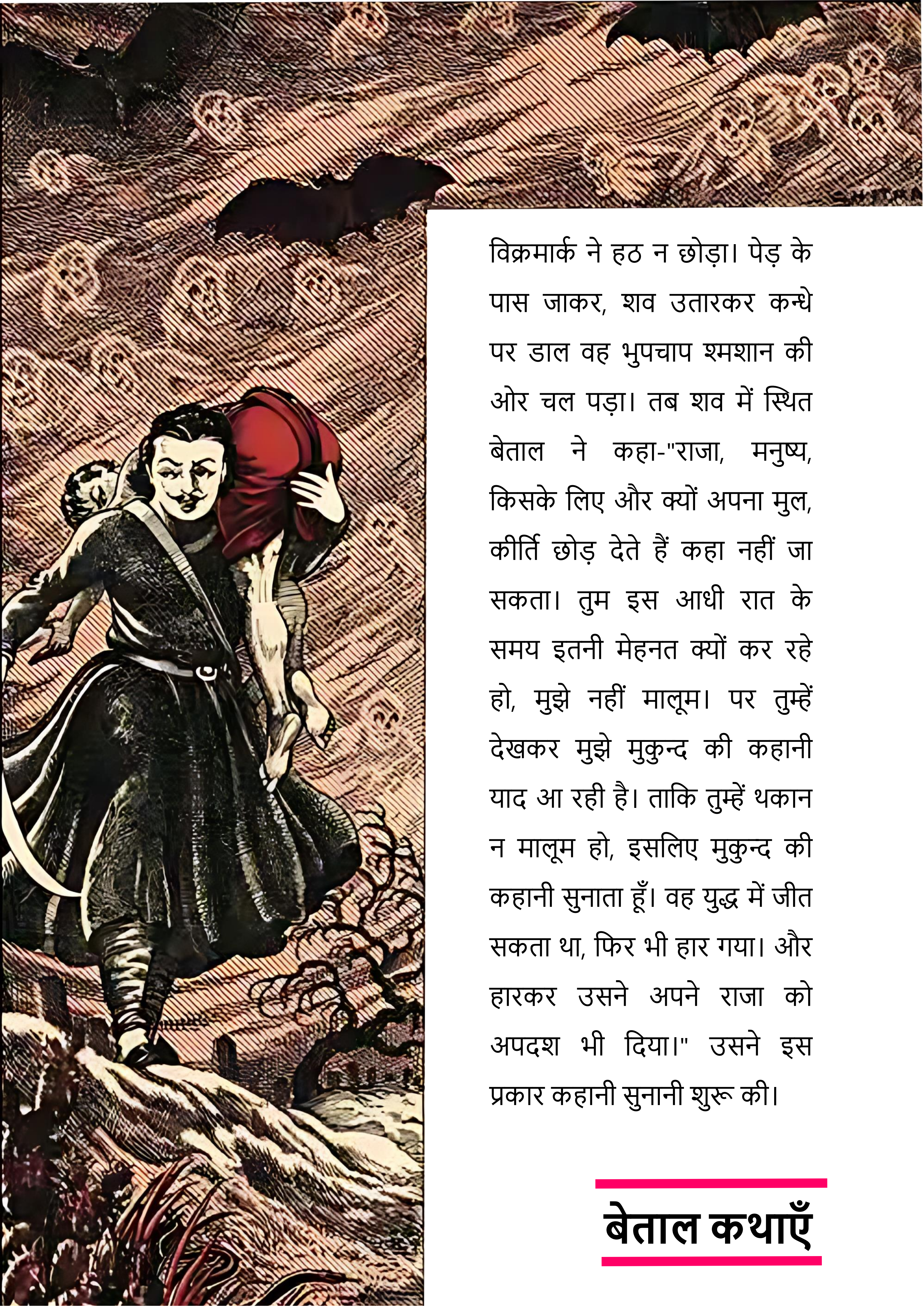


दोनों देशों के बीच का समुद्र खास गहरा न था। धीमे धीमे चलता, मैं आध घण्टे में किनारे पर पहुँचा।



बिना शत्रु को दिखाई दिये झुक झुककर आगे बढ़ा। बन्दरगाह के पास पहुँचकर—

यकायक में उठकर चिल्लाया। वह उनको बिजली का गर्जन-सा लगा। मेरा पर्वत-सा शरीर देखकर वे डर गये। तहलका मच गया। वहाँ के युद्ध पोत के सैनिक पानी में कूदे और जान बचाकर इधर उधर भागने लगे।



विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। पेड़ के पास जाकर, शव उतारकर कन्धे पर डाल वह भुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा, मनुष्य, किसके लिए और क्यों अपना मुल, कीर्ति छोड़ देते हैं कहा नहीं जा सकता। तुम इस आधी रात के समय इतनी मेहनत क्यों कर रहे हो, मुझे नहीं मालूम। पर तुम्हें देखकर मुझे मुकुन्द की कहानी याद आ रही है। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, इसलिए मुकुन्द की कहानी सुनाता हूँ। वह युद्ध में जीत सकता था, फिर भी हार गया। और हारकर उसने अपने राजा को अपदश भी दिया।" उसने इस प्रकार कहानी सुनानी शुरू की।



कोशल देश का राजा महानन्द बड़ा यशस्वी था। उसके राज्य में कभी अराजकता न हुई। उसको सामन्त भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखते। परन्तु रुद्रगिरि के सामन्त रुद्रवर्मा ने राजा की अवहेलना करके स्वयं स्वतन्त्र राजा होने की चेष्टा की। महानन्द शान्तिप्रिय था। परन्तु वह रुद्रवर्मा का विद्रोह न सह सका। उसको सबक सिखाने लिए दस सामन्त और कुछ सैनिकों को लेकर वह रुद्रगिरि गया। वहाँ के किले को उसने घेर लिया। उसने रुद्रवर्मा के पास खबर भिजवाई कि वह तुरन्त समर्पण कर दे।

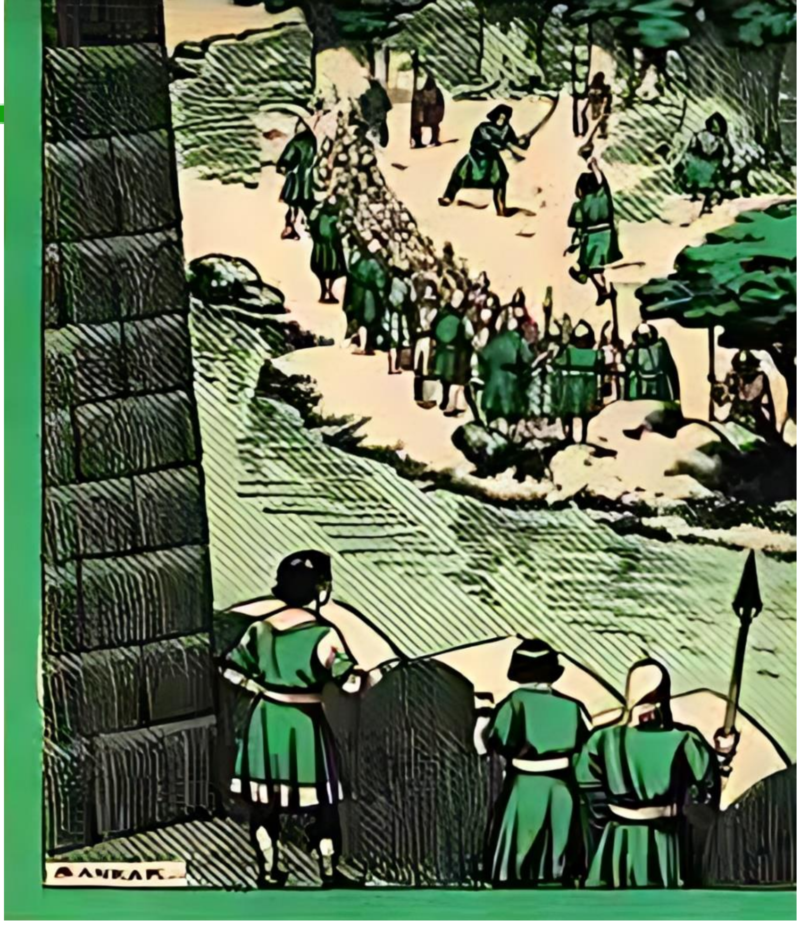
क्योंकि रुद्रवर्मा इस घटना के लिए पहले ही तैयार था, इसलिए उसने खबर भिजवाई कि अगर उसका बस चले तो वह स्वयं किला जीते! सच कहा जाये तो रुद्रगिरि का किला अभेद्य था। रुद्रवर्मा के पास पराक्रमी वीर थे। युद्ध-निपुण सुशिक्षित सेना थी। इसलिए महानन्द की सेना ने किले पर कितने ही हमले किये, वे पर सब विफल रहे। आखिर ऐसी भी स्थिति पैदा हो गई कि बाहरवाले बाहर रह गये और अन्दरवाले अन्दर। घेरा तो बहुत दिन रहा, पर युद्ध न हुआ।

यह देख दोनों पक्ष ऊब गये। "क्यों यह दिन रात की माथापच्ची! चलो घेरा छोड़कर चला जाये।" महानन्द ने अनुभव किया। रुद्रवर्मा ने भी यही सोचा। वहाँ से चला जाना महाराजा के लिए अपमानजनक था। और बिना युद्ध के झुक जाना रुद्रवर्मा को न भाता था। महानन्द के नवयुवक वीरों में मुकुन्द एक था। वह महानन्द का भाणजा भी था। शौर्य और पराक्रम में उसके समान सारी सेना में कोई न था। युद्ध करने की उम्र आने के बाद यह ही पहला अवसर

था, जब वह अपना प्रताप प्रदर्शित कर सकता था। पर वह तभी ही तो अपना पराक्रम दिखाता, जब कि युद्ध होता। वहाँ तो युद्ध ही नहीं हो रहा था।

मुकुन्द चुपचाप बैठना न चाहता था, इसलिए वह रोज आसपास के जङ्गलों में शिकार खेलने जाता करता। वह कभी कभी साथ वालों को मैदान में जमा करता, प्रतियोगितायें चलाता और हर बार स्वयं ही औरों को हराता।

रूद्रवर्मा के छोटे भाई का एक नवयुवक लड़का था। वह भी हर तरह से मुकुन्द की तरह था। उसका नाम मित्रवर्मा था। उसने किले की दीवारों से मुकुन्द द्वारा आयोजित प्रतियोगितायें देखी थीं। उसने भी उन प्रतियोगिताओं में भाग लेना चाहा। इसलिए उसने एक दिन मामूली कपड़े पहने, बिना किसी को दीखे किले के किवाड़ खोले। पेड़ों के झुरमुट से उस जगह पहुँचा, जहाँ प्रतियोगितायें चल रही थीं। उसको देखकर किसी को सन्देह न हुआ कि वह शत्रु पक्ष का था। सबने यही सोचा कि वह उनकी तरफ का ही आदमी था।



जब मित्रवर्मा ने अनुमति मांगी कि उसे भी प्रतियोगिताओं में भाग लेने दिया जाये तो उसको भी आवश्यकतानुसार कुछ आयुध व घोड़े दिये गये। उसने शत्रुओं के उपयोग में हर किसी को हरा दिया। इस तरह उसने यह सिद्ध कर दिया कि वह मुकुन्द से किसी भी दृष्टि से कम न था। तब जाकर महाराजा के तरफ के लोगों को सन्देह हुआ। उनके मुखों से मुस्कराहट गायब हो गई। "हम लोगों में बिना हमारे जाने कैसे कोई वीर हो सकता है? तुम शत्रु पक्ष के हो!" उससे उन्होंने प्रश्न किये।

जब मित्रवर्मा ने किसी प्रश्न का उत्तर न दिया तो उनका सन्देह दुगुना हो गया। जब लोग उसकी तरफ आने लगे, तो मित्रवर्मा एक घोड़े पर सवार होकर किले की ओर भागने लगा। इससे यह साबित हो गया कि वह शत्रु ही था। मुकुन्द को गुस्सा आ गया। "पकड़ो, बचकर न जाने दो।" चिल्लाता वह भी एक घोड़े पर सवार होकर मित्रवर्मा का पीछा करने लगा। मुकुन्द का घोड़ा अच्छी नस्ल का था। वह हवा की तरह भागा। मित्रवर्मा का घोड़ा किले के द्वार पर पहुँचा था कि वह उसके पास पहुँचा। मुकुन्द अपनी तलवार से मित्रवर्मा का सिर काटनेवाला था कि किले की दीवार से एक स्त्री चिल्लाई-"मत मारो, मेरे भाई को मत मारो।"

उसने आश्चर्य से सिर उठाकर देखा। ऊपर से एक बहुत सुन्दर लड़की उसकी ओर देख रही थी। उसके इन्दु के समान मुँह पर भय और चिन्ता देख मुकुन्द स्तब्ध खड़ा हो गया। उसका उठा हाथ नीचे गिर गया। इस बीच मित्रवर्मा किले के फाटक से



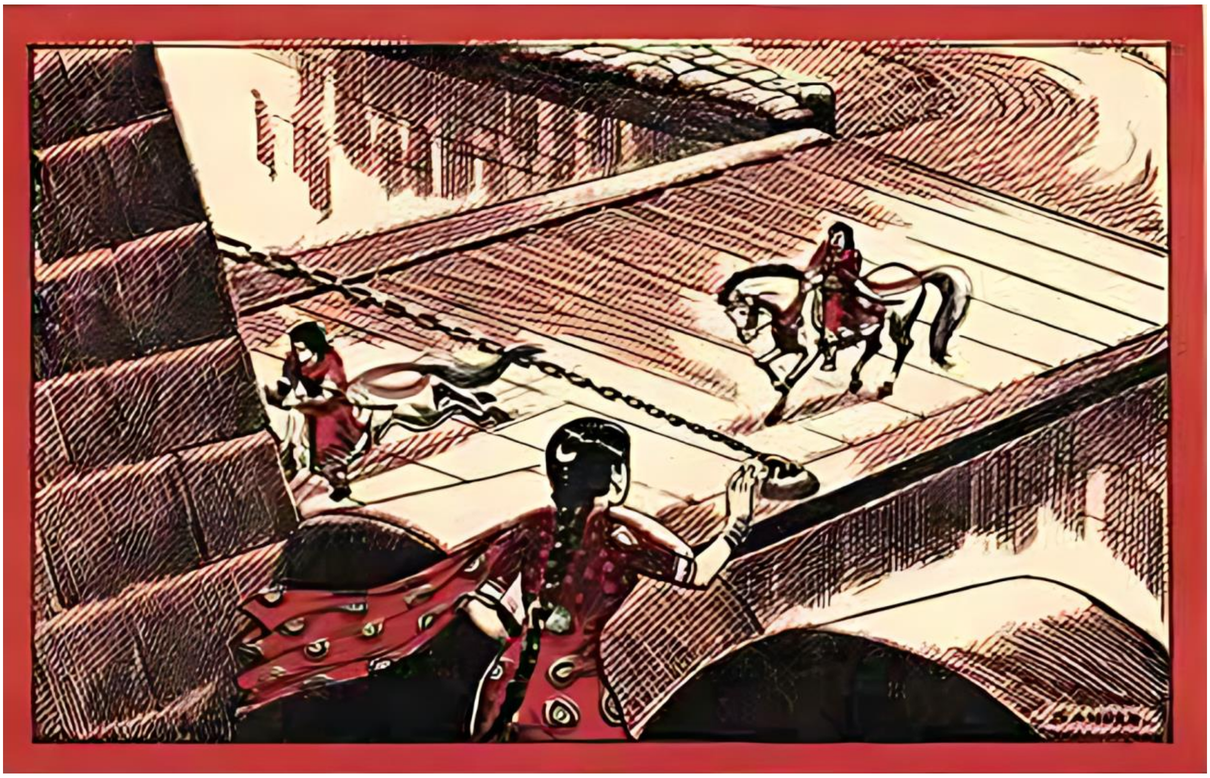
अन्दर चला गया और देखते देखते अदृश्य हो गया।

मुकुन्द ने अपने घोड़े को पीछे मोड़ा। कुछ सोचता सोचता, वह शिविर की ओर चला। अपने समान प्रतापी, अप्सराओं से भी अधिक सुन्दर उसकी बहन को वह थोड़ी देर भी न भूल सका। शत्रु पर उसमें जो क्रोध जगा था वह शान्त हो गया। मुकुन्द को न मालूम वह नवयुवक मित्र-सा लगा।

मित्रवर्मा ने मुकुन्द के पराक्रम की हृदयपूर्वक प्रशंसा की थी। "मैं शत्रु था, तभी तो वह मुझे मारने आया था। अगर वैसा आदमी मित्र हो, तो कितना अच्छा हो।"

तब से मित्रवर्मा अपने ताऊ से कहने लगा-"महाराज! सन्धि कर लीजिये। क्यों व्यर्थ युद्ध करते हैं? उनके विरुद्ध विद्रोह करना हमारी ही गलती है। इसलिए सन्धि के लिए स्वयं भेजना हमारा कर्तव्य है।"

"तो तुम ही यह काम करो। अगर वे घेरा छोड़कर चले गये, तो हमेशा की तरह मैं उनके अधीन रहूँगा। इससे कम





मैं कुछ नहीं मानूँगा। मैं यह भी न मानूँगा कि मैं हार गया हूँ।" रुद्रवर्मा ने कहा।

मित्रवर्मा ने महानन्द महाराजा के पास जाकर रुद्रवर्मा के सन्देश को सुनाया-"अगर वह सामन्त ही बना रहा, तो उसे दण्ड क्या मिला? विद्रोह की फिर क्या सजा हुई? वह पराजय स्वीकार करके, जब तक मेरा आश्रय नहीं माँगता तब तक मैं यह न मानूँगा।" महाराजा ने उससे कहा।

"महाराज, इस शर्त के लिए मेरे महाराजा बिल्कुल न मानेंगे। मुझे खेद है कि मेरा प्रयत्न विफल रहा। मुझे जाने की आज्ञा दीजिये।" मित्रवर्मा ने कहा। मुकुन्द उससे मिला। दोनों ने इस तरह आलिङ्गन किया, जैसे दोनों बचपन के साथी हो। मुकुन्द उसको थोड़ी दूर तक पहुँचाने भी गया।

"यद्यपि हमारे दोनों राजा परस्पर विरोधी हैं, तो भी हम आजीवन मित्र रहेंगे। सिवाय मैत्रीभाव के तुम्हारे प्रति मेरी कोई और भावना नहीं है। तुम जैसा योद्धा मेरा मित्र है, यह सोच मुझे गर्व होता है।" मित्रवर्मा ने कहा।

"मेरा भी यही ख्याल है।" मुकुन्द ने कहा। इतने में उसे एक विचार सूझा-"देखो मित्रवर्मा, इस युद्ध का अन्त करने के लिए एक काम करें। दोनों पक्षों की तरफ़ से हम द्वन्द्व-युद्ध करें। हम मित्र हैं, इसलिए बिना द्वेष के लड़ सकेंगे। हम में जो जीतेगा, उसी का पक्ष विजयी समझा जायेगा। तुम्हारा क्या कहना है?"

"मैं अपने ताऊ से इस बारे में कहूँगा। तुम महाराजा को मनाओ।" मित्रवर्मा

ने मुकुन्द से कहा। फिर दोनों अलग अलग चले गये।

दोनों पक्षों में फिर एक बार सन्धि वार्तालाप हुआ। महानन्द महाराजा ने इस द्वन्द्व-युद्ध की व्यवस्था की। "अगर द्वन्द्व-युद्ध में हमारा प्रतिनिधि मुकुन्द पराजित हुआ, तो हम घेरा छोड़कर तो जायेंगे ही तुम को स्वतन्त्र भी स्वीकार करेंगे। यदि तुम्हारा योद्धा मित्रवर्मा हारा तो तुम्हें राज्य छोड़कर जाना होगा।"

रुद्रवर्मा ने यह शर्त मान ली। उसे अपने भाई के लड़के के पराक्रम में पूर्ण विश्वास था। रुद्रगिरि के किले के पास एक नदी बहती थी। नदी और किले के बीच के मैदान में द्वन्द्व-युद्ध का प्रबन्ध किया गया। रुद्रवर्मा की तरफवाले सब किले की दीवार पर चढ़ गये। महाराजा के पक्षवाले नदी किनारे इकट्ठे हुए। सवेरे द्वन्द्व-युद्ध शुरू हुआ और दुपहर तक चलता रहा, पर न कोई हारा न जीता। समान पराक्रमवाले इस तरह के वीरों की कल्पना करना असम्भव था।

"मित्रवर्मा, बड़ी धूप हो रही है, आओ थोड़ा विश्राम कर लें।" मुकुन्द ने कहा।





दोनों ने प्रेम से हाथ मिलाये। अलग अलग पेड़ों की साया में बैठ गये। दोनों के लिए भोजन लाये गये। गप्पें मारते वे घास पर लेट कर आराम करने लगे। दुपहर दली। फिर युद्ध के लिए दोनों उठे। लड़ते लड़ते, मित्रवर्मा की तलवार यकायक टूट गई। किले की तरफ से हाहाकार और नदी की ओर से हर्षध्वनियाँ सुनाई पड़ीं।

परन्तु मुकुन्द ने अपनी तलवार दूर फेंक दी। "मैं निहत्थे से हथियार लेकर नहीं लड़ूँगा।" मित्रवर्मा को उसकी उदारता पर आश्चर्य हुआ। फिर दोनों में मल्ल-युद्ध हुआ। उसमें भी दोनों समान रहे। कोई हारा या जीता नहीं।

सूर्यास्त का समय हुआ। किले में बैठे लोगों को और नदी किनारे के सैनिकों को ऐसा अनुभव हो रहा था, जैसे वे काँटो पर हों। इतने में यकायक मुकुन्द नीचे गिर गया। किले की दीवारों पर जो बैठे थे, वे तालियाँ बजाने लगे। नदी के किनारेवाले भागे-भागे आये।

"महाराज, मैं हार गया हूँ।" मुकुन्द ने उठते हुए कहा।

महानन्द ने अपना वचन निभाया। उसने रुद्रवर्मा के विजय का समर्थन किया। उसे स्वतन्त्र राजा के रूप में स्वीकार किया। घेरा छोड़कर, वह वापस चला गया।

मुकुन्द और मित्रवर्मा की मैत्री और भी पक्की हो गई। जल्दी ही मुकुन्द ने अपने मित्र की बहन से विवाह भी कर लिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"मुकुन्द ने यह क्यों दिखाया कि वह हार गया था? इसलिए कि उसे मित्रवर्मा की बहन से प्रेम हो गया था? इसलिए



कि प्रेयसी के भाई को उसने यदि जीतने दिया, तो वह उससे और प्रेम करेगी? और क्या इसलिए कि मित्रवर्मा को सन्तुष्ट करने के लिए यह किया था? अगर तुमने इन सन्देहों का जान-बूझकर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"असली कारण इनमें से एक भी नहीं है। मित्रवर्मा के मन में मुकुन्द के प्रति अच्छा अभिप्राय था। उनकी मैत्री में इससे कोई बाधा नहीं आती। मुकुन्द के लिए अपने मित्र की बहन से विवाह कर लेना भी कोई कठिन न था। महानन्द ने उनके द्वन्द्व युद्ध के बारे में जो शर्तें लगाई थीं, मुकुन्द को कुछ अनुचित लगीं। युद्ध न हो, इसलिए उसने द्वन्द्व युद्ध का सुझाव दिया था न कि इसलिए कि रुद्रवर्मा का राज्य से बहिष्कार कर दिया जाये। अगर युद्ध होता भी तो महाराजा रुद्रवर्मा को राज्य से बहिष्कृत नहीं कर सकता था। उसने कई बार युद्ध छोड़कर जाना चाहा था। परन्तु पराभव होगा, यह सोचकर न गया था। उस हालत में रुद्रवर्मा पर हमला करके उसको देश निकाला देने की अपेक्षा, स्वतन्त्र कर देना ही मुकुन्द ने अपना कर्तव्य समझा। नहीं तो वह तभी अपने को विजयी घोषित कर देता, जब मित्रवर्मा की तलवार टूट गई थी। हाथ में आई हुई विजय को उसने तलवार के साथ फेंक दी। इससे यह प्रत्यक्ष होता है कि उसको विजय की अभिलाषा न थी।"

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





हमारी भी बधाई स्वीकार करो